सिद्धयोग

संस्थापक : योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

वर्ष : 47
अंक : 9
दिसम्बर 2014

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन सवांई– 283202 (आगरा) उ.प्र.

प्रकाशन तिथि – 01.12.2014 एक प्रति : रु.

अमृत कण

आत्मानमेव मन्येत कर्तारं सुखदु:खयो:।
तस्माच्छ्रेयस्करं मार्गं प्रतिपद्येत नो त्रसेत्।।

सुख–दु:ख का कर्ता व्यक्ति स्वयं ही होता है, ऐसा समझक कल्याणकारी मार्ग का ही अवलम्बन लेना चाहिए, फिर भयभीत होने की को बात नहीं।

• • •

हितमेवानुरुध्यन्ते प्रपरीक्ष्य परीक्षका:।
रजोमोहावृतात्मान: प्रियमेव तु लौकिका:।।

परीक्षक – विवेकीजन (सारासारविचारद्वारा) ठीक–ठीक परीक्षा कर हितकर मार्ग का सेवन करते हैं, परंतु रजोगुण और तमोगुण से आवृत बुि वाले लौकिक मनुष्य (हिताहित का विचार न करे तत्काल) प्रिय (मालूम होने वा आचार आदि) का सेवन करते हैं (इसलिए दु:खी होते हैं)।

• • •

सुखार्था: सर्वभूतानां मता: सर्वा: प्रवृत्तय:।
सुखं च न विना धर्मात्तस्माद्धर्मपरो भवेत्।।

सम्पूर्ण प्राणियों की सभी चेष्टाएँ सुख– प्राप्त करने के लिए ही होती और वह सुख बिना धर्माचरण के प्राप्त हो नहीं सकता, अत: धर्म में पराय रहना चाहिए।

• • •

मृत्योर्बिभेषि किं मूढ भीतं मुञ्चति किं यम:।
अजातं नैव गृण्हाति कुरु यत्नमजन्मनि।।

अरे मूर्ख (मनुष्य)! क्या तुम मृत्यु से डर रहे हो? डरे हुए को क्या मृ छोड़ देती है? ऐसा समझ रहे हो तो यह तुम्हारी मूर्खता है। मृत्यु तो सबको का का ग्रास बना देती है। वह तो जो जन्म ही नहीं लेता, उसी को नहीं पकड़ती है इसलिए ऐसा प्रयत्न करो, जिससे पुन: जन्म ही न लेना पड़े।

• • •

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक–पत्र

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणानाम् भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

अर्थ :– शुद्ध (निर्विकार) स्वभाव वाले परम ब्रह्म का ध्यान करते–करते मृत्यु के मुख में पड़ा हुआ मनुष्य शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। उस मुक्ति की प्राप्ति के उपाय स्वरूप योग ध्यान शास्त्र के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करने वाली ''सिद्धयोग'' नामक पत्रिका सत्पुरुषों के परम कल्याण की सिद्धि (प्राप्ति) में सक्षम व सहायक हो।

वर्ष : 47 | दिसम्बर 2014 | अंक : 9

वाञ्छा सज्जन संगमे परगुणे प्रीतिर्गुरौ नम्रता
विद्यायां व्यसनं स्वयोषिति रतिर्लोकापवादाद् भयम्
भक्तिः शूलिनि शक्तिरात्मदमने संसर्गमुक्तिः खले
एते येषु वसन्ति निर्मलगुणास्तेभ्यो नरेभ्यो नमः।

अर्थात्

साधु संगति में जिनकी इच्छा बनी रहती है। परगुणों में प्रीति बनी रहती है। गुरु चरणों में नम्रता बनी रहती है। विद्या अर्जन ही जिनका व्यसन है। अपनी धर्मपत्नी में ही जिनकी रति रहती है लोकापवाद से जिनको भय रहता है भगवान शंकर में भक्ति बनी हुई है आत्मनिग्रह में शक्ति बनी हुई है। जो दुर्जनों के संग से मुक्त रहते हैं। जिनमें ये गुण निवास करते हैं – उन मानवों को हमारा नमस्कार है।

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सवांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG

HINDI MONTHLY

Propagating Yoga & Spiritual values

संस्थापक :

योग-योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :

आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई-बहिन

अनुक्रमणिका

1.	विशेष लेख – *योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज*	3
2.	सम्पादकीय	10
3.	श्री मद्‌भागवत्त में योग परिचर्चा– *डॉ. विजय सिंह*	14
4.	मामेकं शरण व्रज – *पं. कृष्ण कुमार पाण्डेय*	18
5.	ध्यान योग विज्ञान से अभीष्ट कार्यो की सिद्धि	21
6.	श्री मानक चन्द पर अहैतुकी कृपा– श्री जगदीश राए बंसल	23
7.	योग–आसन	26
8.	दाता आयेंगे घर तेरे – श्री विजय शर्मा, सहारनपुर	28
9.	शिवलीन अवधूत – श्री कृपालानन्द जी	29
10.	सवाँई के चमत्कारिक चरित्र	30
11.	प्रभुजी का–आकाश गमन	32
12.	योग साधन कक्षा में श्री महाप्रभुजी की विलक्षण कृपायें	38

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 160.00
द्विवार्षिक	: रु. 280.00
आजीवन (10 वर्षीय केवल)	: रु. 900.00

• विशेष लेख

मेरे श्री गुरुदेव

योग-योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

मैं अपने श्री गुरुदेव के चरणारविन्द की महिमा किन शब्दों में लिखूँ यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। गुरुदेव एक ऐसा शब्द है जो सभी के लिए मान्य है और हर व्यक्ति जो किसी भी प्रकार से गुरुदेव की शरणागति प्राप्त कर चुका है, उसके लिए उसके गुरुदेव पूर्ण ब्रह्म हैं। साधक जब तक गुरुदेव के स्वरूप में ईश्वर बुद्धि धारण नहीं करता तब तकवह परम श्रेय के पथ का पथिक नहीं बन सकता, इसलिए भारतीय संस्कृति का ज्ञान रखने वाली भारतीय जनता अपने–अपने गुरुदेव के चरणारविन्द में पूर्ण ईश्वर बुद्धि रखती है व श्री गुरुदेव के चरणारविन्दों में न्यौछावर होना अपना परम पुनीत सौभाग्य समझती है। गुरुदेव क्या है और उनका स्वरूप क्या है? यह एक पृथक लेख का विषय है, जिसका प्रकाशन इस पत्र के किसी अंक में अवश्य होगा। फिर भी मैं इतना बतला देना उचित समझता हूँ कि गुरुदेव के दो स्वरूप होते हैं, एक उनका अपना निज स्वरूप और दूसरा साधक की श्रद्धा से निर्वाचित स्वरूप। जगदात्मा भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने मुखारविन्द से श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के 17 वें अध्याय में कहा है :–

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।

अर्थात् परमात्मा का रूप श्रद्धामय है, जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वैसा ही उसमें सच्चिदानन्द घन नित्य चेतन का स्वरूप होता है। श्रद्धा साधक के अपने हृदय का पवित्र उद्‌गार है। श्रद्धावान् व्यक्ति जिसके विषय में जो सोचता है वहीं से उसको ईश्वरीय शक्ति मिल जाती है। धन्ना जाट, नामदेव आदि के जितने उदाहरण मिलते हैं वह सबके सब श्रद्धा के ही उज्ज्वल प्रतीक हैं। किसी साधारण व्यक्ति को ईश्वरीय भावना से देखना यह भक्त के हृदय की पवित्र भावना है व ईश्वर का ईश्वर होना उसकी अपनी यथार्थता है। गुरुदेव के विषय में भी सभी आस्तिक लोगों की ईश्वरीय भावना होती है और अपनी भावना के अनुरूप ही वह लोग फल को पा लेते हैं ''यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।'' इसके अतिरिक्त यदि श्रद्धेय पुरुष परिपूर्ण है और साधक श्रद्धा का पुतला है तो अभीष्ट लाभ में कोई शंका का

स्थान है ही नहीं। मेरे गुरुदेव जिनके विषय में यह पंक्तियाँ लिखने लगा हूँ सिद्धों के महा सिद्ध, सर्व समर्थ योगयोगेश्वर व सर्वतः परिपूर्ण हैं। उनकी पवित्र ख्याति को बहुत ही कम लोग जान पाये हैं। सम्भव हो सकता है इस विषय में उनका अपना ही संकल्प हो किन्तु उनके चरणारविन्दों के चिन्तन करने वाले सर्वसाधारण जन समुदाय के अन्दर जो–जो चमत्कारिक घटनायें घटित होती रहती हैं उनका इस छोटे–से लेख के अन्दर लिखना भी सम्भव नहीं हो सकता।

उनकी पवित्र जन्म भूमि अमृतसर (पंजाब) है। अमृतसर में ज्योतिष विद्या के गण्यमान्य विद्वान् महामान्य पं. गण्डाराम जी ज्योतिषी के घर में उनका पवित्र अवतरण हुआ। लगभग बारह या चौदह वर्ष की आयु तक बाल–क्रीड़ा करते हुए घर पर रहे। उसके बाद तीव्र वैराग्य के भावों से प्रेरित होकर घर से निकल पड़े और कुछ दिन साधु समुदाय के अन्दर घूमते हुए निर्जन वनों में भ्रमण करने लगे। उसमें सब से बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि जहाँ–जहाँ पर कोई पहुँच वाला सन्त मिलता और मेरे गुरुदेव जी के स्वरूप को पहचानता वही गदगद कण्ठ होकर स्तुति करता और कृपा की भीख माँगता। इन पंक्तियों में मैं अपने गुरुदेव जी के जीवन चरित्र के विषय में कुछ लिखूँ, यह मेरा लक्ष्य नहीं है। फिर भी इतना कह देना तो आवश्यक ही है कि अपने बाल्यकाल में ही वह घटनायें घटीं जो सर्वसाधारण के जीवन में कभी हो नहीं सकतीं। चार साल की उम्र में माता–पिता को दिव्य ज्योति का अनुभव कराना, छः साल की उम्र में वृद्धा पड़ोसिन जो मरणासन्नावस्था में थी उसके सिर पर अपने कर–कमल का स्पर्श कर पूर्ण गति का वरदान देना, लगभग 9 वर्ष की अवस्था में अमृतसर के पास रामतलाई पर दर्शनार्थ आने के इच्छुक महात्माओं को स्वयं ही जाकर दर्शन देना, चौदह या पन्द्रह साल की उम्र में वनों को जाते हुए मुरादाबाद की तरफ से निकलते हुए किसी गाँव में किसी कुम्हार के लड़के के सिर पर कर स्पर्श करके दिव्यानुभूति कराना व खेचरी मुद्रा की पूर्णता का वरदान देना उनके जन्मजात सहज सामर्थ्य का पूर्णपरिचायक है। किन्तु फिर भी लोक–लीला का अनुसरण करते हुए जंगलों में विचरते रहे और अपनी इस वन–यात्रा में कई तपस्वी साधुओं पर परमानुग्रह कर उनको सफल मनोरथ बनाया और अपने आप थोड़े ही समय के अन्दर नेपाल हिमालय को चले गये। नेपाल की राजधानी काठमाडू से ऊपर जहाँ बागमती गंगा का उद्गम स्थान है, वहाँ से कुछ दूर चल कर किसी झारखण्ड में रह कर घोर तपस्या का जीवन व्यतीत करते रहे। उस स्थान पर ही स्वयं सदा शिव स्वरूप एक महापुरुष आये जो मेरे श्री गुरुदेव जी को हिमालय के हिमाच्छादित प्रदेश में आकाश मार्ग से ले गये और एक स्थान पर छोड़ दिया। केवल दो एक बातें बतलाई। एक नर–भक्षक जड़ी दिखलाई और कहा कि यह जड़ी नर–भक्षक है, मनुष्य को खा जाती है। दूसरी बात कि तुम यहाँ रहो, यह कह कर वह महापुरुष अपनी गुफा

में जाकर के समाधिस्थ हो गये। उस स्थान से 6–6 मील 7–7 मील की दूरी पर कोई–कोई सिद्ध महापुरुष रहते थे। मेरे श्री गुरुदेव विचरते हुए उन लोगों से मिले। उन लोगों ने बताया, यह महापुरुष सदाशिव हैं और कई हजार वर्षो से यहाँ पर बैठे हुए हैं। यही सिद्धियों के दाता स्वयं महासिद्ध हैं और छः महीने में एक बार समाधि से उठते हैं। श्री प्रभुजी मेरे गुरुदेव अपने मुखारविन्द से यह बतलाते थे कि जब तक श्री महाप्रभु जी समाधि से उठे तब तक उनकी अपनी भी कई रोज की समाधि लग उठी थी। इसका अर्थ यही है – 'गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यस्तुछिन्नसंशयाः।' अर्थात् गुरुदेव का चुपाचुपी का व्याख्यान हो और शिष्यों के संशय स्वतः ही नष्ट होते चले जायें। यही सद्गुरु तत्व की महत्ता है। सामर्थ्यवान् गुरुदेव को बहुत उपदेश करने की आवश्यकता नहीं होती उनका संकल्प ही ''कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुम'' की शक्ति रखता है। मेरे श्री गुरुदेव हिमालय के उन हिमाच्छादित शिखरों पर लगभग 12 वर्ष रहे और फिर संसार के पतित एवं वेदनापूर्ण दुःखी जीवों को देखकर उन दयासागर जी के मन में दया के भाव उमड़े और उन्हें संसार के आधिव्याधियों से पीड़ित दुःखी प्राणियों को पवित्र योग मार्ग का पथ प्रदर्शन करने के लिए श्री कृपानिधि जी भू–मण्डल पर लौट आये। श्री गुरुदेव जी अपने मुखारविन्द से यह कहा करते थे कि हिमालय के हिमाच्छादित शिखरों पर बैठ करके आधि–व्याधियों से पीड़ित दुःखाक्रान्त जीवों को देखा और उनके भले की भावना पूर्णरूपेण मन में जाग उठी, अतः पुनः संसार में आ करके प्राणी मात्र के भले के लिए पवित्र योग–मार्ग के प्रचार का आरम्भ कर दिया –

प्रज्ञाप्रासादमारूहय अशोच्यः शोचतो जनान्।
भूमिष्ठानिव शैलस्थः सर्वान् प्राज्ञोऽनुपश्यति।।

अर्थात् प्रज्ञा–प्रासाद पर आरूढ़ हुए योगिराज संसार वालों को इस प्रकार देखते हैं जैसे पर्वत शिखर पर बैठे हुए व्यक्ति भूमि वालों को देख लिया करते हैं। ठीक इसी उदाहरण के प्रतीक बन कर मेरे श्री गुरुदेव भू–मण्डल पर आये और उन्होंने योग–प्रचार का पवित्र कार्य प्रारम्भ कर दिया। श्री प्रभुजी ने अवनी–मण्डल पर आकर तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये –

(1) योग के सरल साधनों द्वारा रोग निवृत्ति। इसमें भी सबसे विशेष बात यह थी, निज निर्मित साधनों का प्रचार। उनमें उनका एक प्रमुख साधन था, 'जीवन तत्व साधन' इस जीवन तत्व साधन के अन्दर नौ क्रियायें हैं, जिनके करने से लोगों को अद्भुत व आश्चर्यजनक लाभ होता है। इस साधन के अन्दर सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह लगातार विधि–विधान पूर्वक करने से पेट में इस प्रकार की अग्नि पैदा करता है जिसको 'वृक' अग्नि कहते हैं। जिस प्रकार जंगली जानवर भेड़िया को हर समय भूख लगती रहती है,

उसी प्रकार इन साधनों के करने से मनुष्य को हर समय भूख लगती रहती है। पेट में एक अग्नि सी धधकती मालूम पड़ती है। वह अग्नि तब तक बन्द नहीं होती जब तक मनुष्य का स्वास्थ्य पूर्णरूपेण ठीक न हो जाये। इसके साथ–साथ इस साधन के अन्दर एक प्रमुख विशेषता यह है कि इस साधन को करते हुए बच्चे का ध्यान करने की एक विधि है जिससे मन की एकाग्रता बनकर स्वाभाविक लाभ होता है और बच्चा दीखने लगता है। इस बच्चे के देखने का आह्लाद हर समय बना रहता है और उससे उसके अधिकांश रोग की निवृत्ति हो जाती है। इसके साथ ही साथ दृढ़तर अभ्यास करने के बाद वही बच्चा श्रीकृष्ण आकृति में बदल जाता है, और साधक का अध्यात्म में प्रवेश हो जाता है। इस साधन का नाम है जीवन तत्व साधन।

'जीवन तत्व साधन' को हमने पुस्तक के रूप में प्रकाशित करा दिया है। इसका सभी को अवलोकन करना चाहिए। इन क्रियाओं के लिए समय का विभाजन इस प्रकार रखना चाहिए :–

1 : सर्वोत्तान	– केवल तीन बार समय केवल अधिक से अधिक दो मिनट।
2 : स्कन्ध चालन	– समय पन्द्रह मिनट।
3 : पादचालन	– आठ मिनट।
4 : नाभिचालन	– पन्द्रह मिनट।
5 : जानुप्रसार	– दोनों ओर से तीन बार समय लगभग चार मिनट।
6 : बालमचलन	– केवल एक मिनट।
7 : बच्चे का ध्यान	– पाँच मिनट।
8 : नाड़ी संचालन	– पन्द्रह मिनट।
9 : उत्क्षेपण	– केवल एक या दो मिनट।

इसी प्रकार यदि क्रियायें अधिक बढ़ानी हैं तो समय अधिक बढ़ाया जा सकता है। सभी प्रकार की बीमारियों में मेरे गुरुदेव के अपने मन से प्रकट किया हुआ यह जीवन तत्व साधन अमृत के समान परम लाभदायक है। इसमें भी बच्चे का ध्यान सब प्रकार से लोक व परलोक के लिए परम श्रेयस्कर है।

इसके अतिरिक्त राजयक्ष्मा के क्षीण रोगियों के लिए गुरुदेव जी ने अपने मन से अमर तत्व साधन को निकाला।

(2) **अमर तत्व साधन** – जिसमें केवल क्षीर समुद्र का ध्यान किया जाता है और

हाथ–पैरों को इस प्रकार से चलाया जाता है जिस प्रकार हम समुद्र में तैर रहे हों। जो साधक श्री गुरुदेव की परम कृपा से अपने को क्षीर–सागर में तैरते हुए देखने लग जाते हैं, उनका राज–यक्ष्मारोग बहुत थोड़े दिन में दूर हो जाता है और उनको इतनी प्रसन्नता होती है कि उसमें उनकी समस्त बीमारियाँ भाग जाती हैं और बहुत ही थोड़े दिन के अन्दर अपने आपको पूर्ण स्वस्थ देखने लगते हैं। प्रथम बार श्री गुरुदेव जी यह जीवन तत्व व अमर तत्व आदि साधन ही लोक–हितार्थ कराया करते थे; किंतु कुछ समय बाद नेती, धौति, न्यौली, बस्ति, गजकरणी आदि क्रियायें भी अधिकारी देखकर कराने लगे। इसके अतिरिक्त अन्य आसन, बन्ध, मुद्रायें और विभिन्न प्रकार की गुप्त क्रियाओं का शिक्षण भी आरम्भ कर दिया, यह सबसे बड़ा काम उन्होंने संसार में आकर किया।

(3) शक्तिपात दीक्षा – जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं हो सकता। हमारे शास्त्रों में योग का वर्णन दो प्रकार से मिलता है, सिद्धयोग और साधन योग। साधन योग में मनुष्य साधन करता–करता शनैः–शनैः अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है और सिद्ध योग में सिद्धानुग्रह से ही मनुष्य का उत्थान हो जाता है और उसकी प्रगति इतनी ऊँची होती है कि जिसे वह अपने पुरुषार्थ से अनेक जन्म में भी नहीं प्राप्त कर सकता। सिद्धयोग के दाता पूर्ण सद्गुरु सिद्ध योगिराज ही हो सकते हैं और वही लोग शक्ति संचार भी कर सकते हैं। इस 'सिद्धयोग' का प्रारम्भ भगवान् सदाशिव से हुआ। पुराणों में हिमालय के घन–घोर जंगलों में होने वाले एक सिद्धाश्रम की चर्चा मिलती है, जिसमें भगवान् सदाशिव के शिष्य–प्रशिष्य योगाचार्यगण निवास करते हैं, यह सभी लोग महासिद्ध हैं और समय–समय पर संसार में व्यस्त गृहस्थ जनों को सन्मार्ग–दर्शन के लिए संसार में आया करते हैं। यह लोग सर्व समर्थ महापुरुष हैं। यही लोग शक्ति संचार कर सकते हैं। मेरे श्री गुरुदेव भी इन सबकी तरह एक अनादि महासिद्ध हैं। उन्होंने संसार में आकर शक्ति पात दीक्षा देनी प्रारम्भ की।

उनके कृपा–फल को प्राप्त कर कितने ही सैकड़ों की संख्या में साधु जंगलों में समाधि लगा रहे हैं, और तत्व विजयी होकर अपने शरीरों को एक सुन्दर नवयुवक के समान रखते हैं। कितने ही साधु षट्चक्रों का भेदन करके लोक–लोकान्तरों में गमन करने की शक्ति वाले हो गये और स्वायत्ततनु होकर हिमालय की कन्दराओं में निवास कर रहे हैं। मेरे गुरुदेव योग–योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज सन् 1914 के लगभग हरिद्वार के कुम्भ मेले में प्रथम बार हिमालय से उतर कर आये। जिन जीवों के संस्कार उनके चरणारविन्द में उन्हें ले आते हैं या जो इस पवित्र योग–मार्ग के जिज्ञासु हैं उनको पवित्र योग–मार्ग का अनुयायी बनाकर चरम लक्ष्य की ओर अग्रसर करना, हरिद्वार कुम्भ मेले के समय उनके अपने संकल्प से ही उनके कुटुम्बी जनों ने उन्हें पहिचाना और साधारण चर्चाओं में ही तर्क

वितर्क करने लगे कि महाराज जी आप कहीं पर किसी स्थिति में रहें, अब हम आपको अवश्य ही पहचान लेंगे। श्री महाराज जी ने उन लोगों से कहा कि भाई! हम साधू हैं तुम्हें हमसे आग्रह नहीं करना चाहिए। तुम अपना कार्य करो हम अपना कार्य करेंगे। किंतु वे लोग नहीं बदले। आग्रह करते ही रहे। इसी बीच में उन्होंने आश्चर्य देखा कि उनसे बात करते–करते ही श्री गुरुदेव जी वहीं अन्तर्धान हो गये। वह लोग लाख प्रयत्न करने पर भी उनका अन्वेषण नहीं कर सके। अपनी हठ–धर्मी का दुष्परिणाम पाकर उन सभी को महान् दुःख हुआ। किन्तु उनको यह भी ज्ञान हो गया कि यह हमारे कुटुम्बी भाई बन्धु ही नहीं है किन्तु कोई सामर्थ्य वान् परम योगिराज हैं। श्री गुरुदेव जी की इस प्रभुता को जानकर लोगों ने अत्यन्त विनय की, जिसके फलस्वरूप श्री प्रभु जी वहीं प्रकट हो गये किन्तु एक बालक के रूप में। उस बालक को यह लोग नही पहचान सके। सोचते रहे यह कोई 15–16 साल का बालक है। कहीं कुम्भ मेले में आया होगा, हमारे पास आकर बैठ गया है। किन्तु इन लोगों की अनभिज्ञता को देखकर उस बालक के रूप में छिपे हुए सर्व समर्थ सिद्धो के सिद्धेश्वर मेरे गुरुदेव उनसे मुस्करा कर कहने लगे कि भाई तुम किस चिन्ता में हो? किसका अन्वेषण कर रहे हो? उन लोगों ने कहा: ब्रह्मचारी जी! हमारे एक भाई साधू रूप में अभी–अभी यहाँ थे, किन्तु पता नहीं कहाँ चले गये हैं? हमने उनके साथ बड़ा आग्रह किया था, उस आग्रह का हमें भारी पश्चाताप है। जब वह लोग यह कह ही रहे थे तो उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि वहाँ कोई ब्रह्मचारी नहीं है, प्रत्युत योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज हैं। इस अद्भुत घटना को देखकर सभी कुटुम्बी जनों ने निश्चय कर लिया कि यह केवल मात्र हमारे कुटुम्बी ही नहीं है, किन्तु इस आकृति में छिपे हुए कोई सर्वसमर्थ योगिराज हैं उसके बाद उन्होंने श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में कोई हठ नहीं की और अपने–अपने घरों को लौट गये। कुछ लोगों ने श्री प्रभुजी को अमृतसर ले जाने का हठ किया श्री प्रभुजी की स्वयं अपनी इच्छा थी ही इसलिए वह हिमालय से उठकर के आये। उनके हठ को स्वीकार करके अमृतसर चले गये और वहाँ जाकर कुछ समय के लिए पण्डित वेष में रहने लगे। यह श्री प्रभु जी का गृहस्थ वेष था। इस वेष मे उनको कोई पहचान नहीं सकता था। केवल अपने निवास स्थान पर रहते हुए जिस समय वन की बात किया करते थे सुनने वाले समझते थे कि इतने घनघोर जंगलों में सम्भवतः नहीं गये होंगे। अचानक इन्हीं दिनों में एक घटना घटी। अमृतसर में हाल दरवाजे से बाहर एक सराय है, जिसको सन्तराम की सराय कहते हैं। उसमें एक परम तेजस्वी देदीप्यमान मुख–मण्डल वाले एक महात्मा आकर समाधिस्थ होकर बैठ गये। वह बिल्कुल नग्न थे। तीन दिन व तीन रात्रि बिना कुछ खाये पिये समाधि स्थिति में वह महात्मा वहीं बैठे ही रहे। सारे शहर में उनकी प्रख्याति फैल गई। दर्शकों की भारी भीड़ उनके पास एकत्र हो गई। श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में जाकर गृहस्थी लोगों ने प्रार्थना की श्री महाराज जी! आप बड़े–बड़े जंगलों में हो आये हैं, किन्तु अभी तक आपको इस प्रकार के सिद्ध योगिराज जी

नहीं मिले होंगे जैसे महात्मा सन्तराम की सराय में आकर बैठे हैं? वह तीन दिन से बिल्कुल निराहार है और पत्थर की मूर्ति की तरह से बैठे हैं, न हिले हैं न डुले हैं। चलिए आपको भी उनके दर्शन करा लावें। श्री गुरुदेव जी ने उत्तर दिया, भाई! हमें रहने दो, तुम्हीं दर्शन कर आओ। जब तीन रात्रि से बैठे हैं तो अच्छे तो हैं ही। किन्तु लोगों ने बड़ी भारी हद की। लोगों के मन में यह भावना थी कि उस महात्मा को देखकर श्री गुरुदेव जी आश्चर्य चकित हो जावेंगे और कहेंगे कि हाँ, यह तो कोई अवश्य सिद्ध योगिराज हैं। किन्तु बात कुछ और ही थी। श्री प्रभु जी उन लोगों के आग्रह करने पर सन्तराम की सराय में गये। जहाँ वह महात्मा समाधि लगाकर बैठे हुए थे, धीरे-से उनके पीछे जाकर खड़े हो गये। लोगों को यह आश्चर्य हुआ कि और लोग सामने खड़े हैं और यह पीठ के पीछे खड़े हैं। थोड़ी ही देर में लोगों ने देखा कि महात्मा के शरीर में एक कम्प पैदा हुआ। उस कम्पन के साथ उनके प्राण-कोष ब्रह्माण्ड से नीचे आ गये। महात्मा सचेत होकर जाग उठे और बड़ी तीव्रता के साथ खड़े होकर परम करुणार्णव मेरे श्री गुरुदेव जी के चरणारविन्द में गिर पड़े और चरणों से लिपट गये। महात्मा इतने रोये कि श्री प्रभुजी के बहुत समझाने पर भी उनके आँसू बन्द नहीं होते थे। श्री प्रभुजी ने उनको दोनों हाथों से उठाकर कण्ठ से लगा लिया और सिर पर हाथ रख आशीर्वाद देते हुए कहा – बेटा! रोते क्यों हो? मैंने ही तुमको शतपथ से बुलाया है तुम्हारी समाधि अपूर्ण थी, आज से वह पूर्ण हो जायेगी और तुम्हारी खेचरी मुद्रा सिद्ध हो जायेगी। आकाश-गमन आदि सब ठीक हो जायेगा। महात्मा ने बड़ी कठिनता से श्री प्रभुजी से हाथ जोड़ कर प्रार्थना की। प्रभो! हे सर्वशान्तिमान् ! मेरे रोने का केवल एक ही कारण है। मैं आपका मन्द बालक हूँ। तीन दिन तीन रात मेरी कठोर परीक्षा के बाद आपने मुझे दर्शन दिये हैं। मैं तड़पता रहा चरणारविन्दों के दर्शन के लिए, किन्तु आपके चरणारविन्द में बहुत से स्त्री पुरुषों का जमघट होने के कारण मैं नहीं आ सका और आप दर्शन देने के लिए नहीं आये। आज मेरा यह शुभ दिन है। पता नहीं मेरे कौन से पुण्य प्रारब्ध से प्राणिमात्र के अन्तर्दृष्टा श्री प्रभुजी ! आपने मुझे आकर कृतार्थ किया है। श्री प्रभुजी ने उस महात्मा को कुछ समय अपने पास रखकर हिमालय भेज दिया। जो लोग श्री प्रभुजी के साथ सन्तराम की सराय में गये थे, उनके आश्चर्य का तो कोई ठिकाना ही नहीं रहा। वह लोग भली प्रकार जान गये, इस विप्र वेष में छिपे यह अवश्य कोई सर्वसमर्थ महापुरुष हैं। यह पहली घटना थी जिससे कुछ सर्व साधारण लोग मेरे गुरुदेव के स्वरूप को कुछ-कुछ समझने लगे। यहाँ से ही शक्तिपात और सब प्रकार के योग प्रचार का कार्य आरम्भ हुआ। मेरे गुरुदेव ने इस बीच में क्या-क्या कार्य किया, वह शनैः-शनैः इस पत्र में प्रकाशित होता रहेगा जिससे पाठकगण समझते रहें कि सद्गुरुदेव कौन होता है और उनके कार्य किस प्रकार के हुआ करते हैं।

श्री मद्वाल्मीकीय रामायण और योग

– योगाचार्य डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी

(गतांक से आगे)

श्री राम के राज्याभिषेक में विघ्न पड़ने के कारण लक्ष्मण अत्यन्त दु:खी हो गये। वे क्रोध में भरे हुये गजराज की भाँति आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहे थे। अपने मन को वश में रखने वाले श्री राम धैर्यपूर्वक चित्त को निर्विकार रूप से काबू में रखते हुये प्रिय भाई लक्ष्मण के पास जाकर बोले–लक्ष्मण ! धैर्य का आश्रय लेकर अपने मन के क्रोध और शोक को दूर करो। चित्त से अपमान की भावना निकाल लो। मेरे अभिषेक के लिये जो उत्तम सामग्री एकत्र की गई है उसे शीघ्र हटा लो और ऐसा कार्य करो जिससे मेरे वन गमन में बाधा उपस्थित न हो ! जैसे उत्साह से तुमने यह सामग्री जुटाई है उसी उत्साह से इन्हें हटा लो ! मैंने कभी माता या पिता का अनजान में भी कोई अपराध किया हो मुझे याद नहीं आता। पिता जी सदा सत्यवादी और सत्यपराक्रमी रहे हैं। वे परलोक के भय से सदा डरते हैं इसलिये मुझे वही कार्य करना चाहिये जिससे उनका पारलौकिक भय दूर हो। यदि अभिषेक सम्बन्धी कार्य रोका नहीं गया तो पिता जी को भी मन ही मन यह सोचकर संताप होगा कि मेरी बात मानी नहीं गई।

उनका यह मनस्ताप मुझे सदा सन्तप्त करता रहेगा। मैं शीघ्र ही वल्कल वस्त्र धारण कर, सिर पर जटा जूट बाँधे वन को चला जाऊँगा तभी कैकयी के मन को सुख मिलेगा। प्रिय लक्ष्मण ! मेरे मन में कभी भी माताओं के प्रति भेदभाव नहीं रहा और कैकयी भी पहले मुझ में या अपने पुत्र में अन्तर नहीं समझती थी। मेरे पिता को कटु वचन कहती हुई मुझे वन में भेजने का विचार उनके मन में आया है मैं इसमें दैव ही कारण मानता हूँ। जिसके बारे में कभी कुछ सोचा न गया हो वही दैव का विधान है। प्राणियों में अथवा उनके अधिष्ठाता देवताओं में भी ऐसा कोई नहीं है जो उस दैव के विधान को मेंट सके। अत: उसके ही विधान से या प्रेरणा से मुझ में और कैकयी में यह भारी उल्ट फेर हुआ है।

सुख दु:खे भयक्रोधो लाभालाभौ भवावर्वौ।
यस्य किंचित्त तथाभूत ननु दैवस्य कार्य तत्।

सुख दु:ख, भयक्रोध, लाभ हानि, उत्पत्ति और विनाश तथा इस प्रकार के और भी जितने कार्य हैं, जिनका कोई कारण समझ नहीं आता वे सब दैव के कार्य हैं। जो बात बिना–विचारे सिर पर आ पड़ती है और प्रयत्नों द्वारा आरम्भ किये गये कार्य को रोककर नया ही काण्ड उपस्थित कर देती है वह अवश्य दैव का विधान है। मुझे राज्याभिषेक के कार्य में विघ्न उपस्थित हो जाने पर कोई दु:ख या संताप नहीं हो रहा है उसी प्रकार हे लक्ष्मण ! तुम भी

राज्याभिषेक के कार्य को बन्द कर सारी सामग्री हटा दो। मेरे लिये राज्य या वनवास दोनों समान हैं। मेरे राज्याभिषेक में जो विघ्न आया है उसमें कैकयी कारण नहीं है वह दैव के आधीन थी इसी प्रकार से पिता जी भी इसमें कारण नहीं हैं। तुम तो दैव और उसके अद्‌भुत प्रभाव को जानते ही हो, वही इन सब मे कारण है। इन बातों को सुनकर लक्ष्मण जी काफी क्रोध में भरकर अपने भाई श्री राम से कहते हैं – आप धर्म भीरू हो रहे हैं तथा आप उस असमर्थ दैव नामक तुच्छ वस्तु को प्रबल बता रहे है। आप उस दैव की स्तुति या प्रशंसा क्यों कर रहे हैं ? धर्मात्मन ! दुनिया में ढोंग करने वाले बहुत से लोग हैं। यह वरदान वाली बात आप के राज्याभिषेक के ठीक पहले क्यों किया गया है ? ज्येष्ठ पुत्र के होते हुये छोटे का अभिषेक करना लोक विरुद्ध कार्य है। आप के सिवा किसी और का अभिषेक हो यह मुझे सहन नहीं है। महामते ! पिता के जिस वचन को मानकर आप मोह में पड़े हुये हैं जिसके कारण आप की बुद्धि में दुविधा उत्पन्न हो गई है। मैं इसे धर्म मानने का पक्षपाती नहीं हूँ। ऐसे धर्म का मैं घोर विरोध करता हूँ। आप अपने पराक्रम से सब कुछ करने में समर्थ हैं फिर भी कैकयी के वश में रहने वाले पिता के अधर्म पूर्ण एवं निन्दित वचन का पालन कैसे करेंगे ? वरदान की झूठी कल्पना का पाप करके आप के अभिषेक में रोड़ा अटकाया जा रहा है। इस कपटपूर्ण धर्म के प्रति आसक्ति निन्दित है।

भ्राता जी ! जो कायर है जिसमें पराक्रम का नाम नहीं है वही दैव का भरोसा करता है। सारा संसार जिन्हें आदर की दृष्टि से देखता है वे शक्तिशाली वीर पुरुष दैव की उपासना नहीं करते। जो अपने पुरुषार्थ से दैव को दबाने में समर्थ है वह पुरुष दैव के द्वारा कार्य में बाधा पड़ने पर खेद नहीं करता और शिथिल होकर भी नहीं बैठता। आज संसार के लोग देखेंगे कि दैव की शक्ति बड़ी है या पुरुष का पुरुषार्थ। आज दैव और मनुष्य में कौन बलवान है, और कौन दुर्बल इसका स्पष्ट निर्णय हो जायेगा। जिन लोगों ने दैव के बल से आज आपके राज्य अभिषेक को नष्ट हुआ देखा है वे ही आज मेरे पुरुषार्थ से अवश्य ही दैव का भी विनाश देख लेंगे। समस्त लोकपाल और तीनों लोकों के सम्पूर्ण प्राणी आज श्री राम के राज्याभिषेक को नहीं रोक सकते फिर केवल पिता जी की तो बात ही क्या है ? मैं पिता की तथा अपने पुत्र के राज्याभिषेक के प्रयत्न में लगी कैकयी की भी आशा को भस्म कर दूगाँ–धूल में मिला दूँगा। ये मेरी दोनों भुजायें केवल शोभा के लिये नहीं हैं। ये भुजायें, बाण तथा मेरी तलवार शोभा के लिये नहीं, शत्रुओं का दमन करने के लिये हैं। जिसे मैं अपना शत्रु मानता हूँ उसे कदापि जीवित नहीं देखना चाहता हूँ। प्रभो ! बतलाइये, मैं आप के किस शत्रु को अभी प्राण, यश और सुहृद जनोंसे विलग कर दूँ। जिस उपाय से यह पृथ्वी आप के अधिकार में आ जाये उसके लिये आप आज्ञा दीजिये मैं आप का दास हूँ। लक्ष्मण की ये बातें सुनकर श्री राम ने उसके आँसू पोछे और सान्त्वना देते हुये कहा – मुझे तो तुम माता–पिता की आज्ञा के पालन में ही दृढ़ता पूर्वक स्थित समझो ! यही सत्पुरुषों का मार्ग है। जब कौशल्या ने देखा कि श्री राम वन जाने को तुले हुये हैं तो उसने भी साथ चलने की बात कही। उन्होंने कहा –वत्स ! जैसे बछड़े के पीछे–पीछे धेनु चलती है उसी प्रकार से मैं भी

तुम्हारे पीछे चलूँगी। माँ के इस हठ को देखकर श्री राम बोले – माँ ! कैकयी ने राजा के साथ धोखा किया है इधर मैं भी वन को जा रहा हूँ ऐसी स्थिति में तुम भी उनका परित्याग कर दोगी तो निश्चित ही ये जीवित नहीं रह पायेंगे। पति का त्याग नारी के लिये बड़ा ही क्रूरता पूर्ण कर्म है। सत्पुरुषों ने इस की निन्दा की है। अतः तुम्हें ऐसी बात मन में नहीं लानी चाहिये। देखो, धर्मशास्त्र कहता है।

भर्तुः किल परित्यागो नृशंसः केवलं स्त्रियः

सः भवत्या न कर्तव्यो मनसापि विगर्हितः

इसलिये जब तक महाराज दशरथ जीवित हैं तब तक आप उनकी सेवा करें। पति की सेवा ही स्त्रियों के लिये सनातन धर्म है। श्री राम के पति धर्म सम्बन्धी प्रमाणयुक्त वचनों को सुनकर कौशल्या ने कहा, " अच्छा बेटा ! मैं ऐसा ही करूँगी । " श्री राम ने पुनः कहा–मेरे वन चले जाने के बाद जिस तरह भी महाराज को पुत्र वियोग के कारण कोई कष्ट न हो, आप सावधानी से वैसा प्रयत्न करना।

उत्कृष्ट गुण और जाति आदि की दृष्टि से परम उत्तम तथा व्रत–उपवास में तत्पर होकर भी जो नारी पति की सेवा नहीं करती उसे पापियों को मिलने वाली गति (नरक आदि) की प्राप्ति होती है।

वृतोपवास निरता या नारी परमोत्तमा

भर्तारं नानुवर्ते सा च पाप गतिर्भ–वेत्।।

केवल पति की सेवा करने से स्त्री को स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है। माता कौशल्या कहने लगी – बेटा ! मैं तुम्हारे वन जाने की इच्छा को नहीं बदल सकती। निश्चय ही काल का उलंघन करना अत्यन्त कठिन है। इस प्रकार से माता श्री राम को वन में जाने की आज्ञा देने लगी। उन्होंने कहा–राघव! तुम नियमपूर्वक प्रसन्नता के साथ जिस धर्म का पालन कर रहे हो, वही सब ओर से तुम्हारी रक्षा करे। भगवान स्कन्ध देव, सोम, बृहस्पति, सात ऋषिगण और नारद सब ओर से तुम्हारी रक्षा करें। बेटा ! तुम्हें भयंकर राक्षसों, क्रूर कर्मा पिशाचों तथा समस्त माँस भक्षी जन्तुओं से कभी भय न हो। समस्त लोक के स्वामी ब्रह्मा, जगत के कारण भूत परब्रह्म ऋषिगण तथा उनके अतिरिक्त जो देवता हैं वे सब के सब वनवास के समय तुम्हारी रक्षा करें।

ऋषयः सागराः द्वीपा वेदा लोका दिशश्च ते

मङ्गलानि महाबाहो ! दिशन्तु शुभ मंगलम्

महाबाहो ! ऋषि, सागर, द्वीप, वेद समस्त लोक और दिशायें तुम्हें मंगल प्रदान करें। तुम्हारा सदा शुभ–मंगल हो। इस प्रकार से सब प्रकार से कल्याण कामना करती हुई भामिनी कौशल्या ने अपने पुत्र के मस्तक पर अक्षत लगाकर चन्दन और रोली लगाई तथा सकल मनोरथ सिद्ध करने वाली विशेल्यकरणी नामक शुभ औषधि लेकर रक्षा के उद्देश्य से से मन्त्र

पढ़ते हुये उसे श्री राम के हाथ में बाँध दिया और उत्कर्ष लाने के लिये मन्त्र जप भी किया माता ने श्री राम के मस्तक को सूँघा और अपने हृदय से लगाकर कहा – वत्स राम ! तुम सफल मनोरथ होकर सुख पूर्वक वन को जाओ। जब तुम पूर्णकाम होकर रोग रहित सकुशल अयोध्या में लौट आओ। उस समय राजमार्ग पर स्थित देखकर प्रसन्न होऊँगी तथा पूर्ण चन्द्रमा के समान तुम्हारे श्री मुख को देखूँगी। माता कौशल्या ने राम की प्रदक्षिणा की श्री राम ने भी माता के चरणों को दबाकर बार–बार प्रमाण किया और सीता के महल की ओर चल पड़े।

यह संसार धर्म - क्षेत्र है

" यह संसार धर्म क्षेत्र है, नैतिक संघर्ष के लिए समर भूमि है। निर्णायक तत्व मनुष्यों के हृदयों में विद्यामान है, जहां कि ये युद्ध प्रतिदिन प्रति घड़ी चल रहे हैं। पृथ्वी से स्वर्ग तक और दुःख से आत्मा तक धर्म के मार्ग द्वारा ही उठा जा सकता है। अपने शारीरिक अस्तित्व की दृष्टि से भी हम धर्म का आचारण करते हुए उस सुरक्षा की स्थिति तक पहुँच सकते हैं, जहाँ पहुँच कर प्रत्येक कठिनाई का अंत आनन्द में होता है। यह संसार धर्म क्षेत्र है, सन्तों के पनपने की भूमि, यहाँ आत्मा की पवित्र ज्वाला कभी बुझने नहीं पाई है। इसे कर्म-भूमि भी कहा जा सकता है। हम इसमें अपना कार्य करते हैं और आत्मा के निर्माण के प्रयोजन को पूरा करते हैं।

- डॉ. राधाकृष्णनन

श्रीमद्भागवत में योग परिचर्चा

– डॉ. विजय सिंह

स्कन्ध तीन अध्याय सात में ब्रह्मा जी ने नारद से कहा –

तुभ्यं च नारद भृशं भगवान विवृद्ध
भावेन साधुपरितुष्ट उवाच योगम्।
ज्ञानं च भागवतमात्मसतत्त्वदीपं
यद्वासुदेव शरणा विदुरञ्जसैव ।।19।। स्क 2, अ 7

ब्रह्मा जी ने नारद से कहा– तुम्हारे अत्यन्त प्रेम के कारण वे प्रभु हंस के रूप में अवतरित होकर तुम्हें योग, ज्ञान और आत्मतत्त्व का उपदेश किया। क्योंकि तुम उनके शरणागत भक्त हो। अवतारों का उद्देश्य दुष्टों का दलन तथा साधुपुरुषों को सद्–तत्व से परिचय कराना रहा है।

संक्षेप में ही भगवान राम एवं कृष्ण के अलौकिक चरित्रों का विवरण दिया गया है। वे कथायें बहुधा हम सभी जानते हैं। एक श्लोक में उन परम पुरुष के योग माया को अशत: कौन–कौन जानते हैं उनका नाम बताया गया है–

वेदाहमङ्ग परमस्य हि योगमायां
यूयं भवश्च भगवानथ दैत्यवर्य:।
पत्नी मनो: स च मनुश्च तदात्मजाश्च,
प्राचीनबर्हिर्ऋभुरङ्ग उत ध्रुवश्च ।।43।। स्क 2, अ 7

ब्रह्माजी, नारद, सनक, सनातन, सनन्दन आदि, भगवान शंकर, प्रहलाद सतरुपा, मनु, पियव्रत आदि, प्राचीन बर्हि, ऋभु और ध्रुव परम पुरुष की योगमाया को जानते है। इनके सिवाय इक्ष्वाकु, पुरुरवा, मुचुकुन्द, जनक, गाधि, रघु, अम्बरीष, सगर, गय ययाति आदि तथा मान्धाता, अर्लक, शतधन्वा, अनु, रन्ति देव, भीष्म, बलि, दीलीप, सौभरि, अमूर्त्तरय, उत्तंक, शिवि, देवल, पिप्पलाद, सारस्वत, उद्धव, परासर,भूरिषेण, विभीषण, हनुमान, शुकदेव, अर्जुन, आर्ष्टिषेण, विदुर और श्रुतदेव आदि राजर्षि एव महात्मा योग माया को जानते है।

आठवें अध्याय में राजा परीक्षित बड़े आर्त भाव से गुरु वरेण्य श्री शुकदेव जी से प्रार्थना किया है – महाभाग्यवान प्रभो ! आप मुझे ऐसा उपदेश कीजिये कि मैं अपने आसक्ति रहित मन को सर्वात्मा श्री कृष्ण में तन्मय करके अपना शरीर छोड़ सकूँ।

कथयस्व महाभाग यथाहमखिलात्मनि।
कृष्णे निवेश्य नि:संग मनस्त्यक्ष्ये कलेवरम्।।

यह अध्याय सम्पूर्णत: राजा परीक्षित के मौलिक प्रश्नों से भरा हुआ है जिसका उत्तर

भगवान शुकदेव अगले अध्यायों में देंगे।

उदाहरणार्थ देखेयोग सन्दर्भ के प्रश्न –

प्रभो! भगवान की आराधना की और अध्यात्म योग की विधि क्या है ? योगेश्वरों को क्या–क्या ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं तथा अन्त में उन्हें कौन सी गति मिलती है ? योगियो का लिंग शरीर किस प्रकार भंग होता है ?

वेद, उपवेद, धर्म शास्त्र, इतिहास और पुराणों का स्वरूप एवं तात्पर्य क्या है ? आदि–आदि प्रश्न किये गये हैं।

तत्त्वानां परिसंख्यानं लक्षणं हेतु लक्षणम्।
पुरुषाराधनविधिर्योग स्याध्यात्मिकस्य च ।।19।। स्क 2, अ 8
योगेश्वरैश्वर्य गतिर्लिंग भग्नस्तु योगिनाम्
वेदोपवेदधर्माणामिति हासपुराणयोः ।।20।। स्क 2, अ 8

उपरोक्त प्रश्न जिज्ञासा का समाधान करते हुये द्वीतिय स्कन्ध के नवें अध्याय में, ब्रह्मा जी द्वारा सृष्टि हेतु पर्याप्त दृष्टि शक्ति न होने पर वे एक हजार दिव्य वर्षो तक एकाग्र चित्त से अपने प्राण,मन,कर्मेन्द्रिय तथा ज्ञानेन्द्रियों को वश में करके तपस्या की जिससे उन्हें समस्त लोकों को सृजन करने का सामर्थ प्राप्त हुआ। भगवान नारायण प्रकट दर्शन देकर प्रसन्नता पूर्वक बोले– सृष्टि रचना हेतु तुम्हारे द्वारा किये गये तप से मैं प्रसन्न हुआ। मन में कपट रखकर योगसाधन करने वाले मुझे कभी प्रसन्न नहीं कर सकते। " **चिरं भृतेन तपसा दुस्तोषः कूटयोगिनाम** " अतः मेरे स्वरूप विस्तार एवं मेरी योगमाया को भली प्रकार जानकर तुम अविचल समाधि के द्वारा उन्हें सिद्धान्त तथा पूर्ण निष्ठा को प्राप्त हो जाओ। ऐसा करने से कल्प–कल्प में विविध प्रकार की सृष्टि रचना करते हुये भी तुम कभी मोह ग्रसित नहीं होगे।

आगे विराट पुरुष नारायण का एकार्णव जल में योगनिद्रित रहकर बहुत काल बाद योगनिद्रा से जगकर उन्होंने अखिल ब्रह्माण्ड के बीज स्वरूप को तीन भागों में बाँटा–अधिदैव, अध्यात्म और अधिभूत। पुनः यहाँ विराट पुरुष के संकल्प से सृष्टि रचना का वर्णन किया गया है। कल्पों, महाकल्पों तथा मनवन्तारों पर विस्तार से विवरण दिया गया है।

तीसरे स्कन्ध के प्रथम अध्याय में श्री विदुर एवं उद्धव से हुई भेंट में उद्धव जी द्वारा भगवान के लीला सम्बरण तथा उन्हें मैत्रेय ऋषि के पास जाकर अध्यात्म–ज्ञान प्राप्त करने का भगवत आदेश बताया। श्री विदुर जी द्वारा परम भक्त उद्धव जी से भगवान के बाल लीलाओं का वर्णन करने का आग्रह देखकर, वे श्री कृष्ण के अनुराग में सराबोर होकर दो घड़ी तक कुछ न बोल सके। वे तीव्र भक्तियोग से डूबकर आनन्द–मग्न हो गये – " **तीव्रेण भक्तियोगेन निमग्नः साधु निर्वृतः** "।

उद्धव जी अपने चित्त को स्थिर कर विदुर जी से बोले–भगवान ने अपनी योगमाया का

प्रभाव दिखाने के लिये मानवलीलाओं के योग्य जो दिव्य श्रीविग्रह प्रकट किया था, वह इतना सुन्दर था कि उसे देखकर सभी मोहित हो ही जाते थे। उनके रूप में सौभाग्य और सुन्दरता की पराकाष्ठा थी। देखें –

यन्मर्त्यलीलौपयिकं स्वयोग मायाबलं दर्शयता गृहीतम्।

विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धे: परं पदं भूषण भूषणाङ्गम्।।12।।

विदुर जी आपने राजसूय यज्ञ में प्रत्यक्ष ही देखा था कि श्री कृष्ण से द्वेष करने वाले शिशुपाल को वह सिद्धि मिल गयी, जिसकी बड़े–बड़े योगी भली भाँति योग साधना करके प्राप्त करते हैं। उनका विरह कौन सह सकता है –

दृष्टा भवद्भिर्ननु राजसूये,

चैद्यस्य कृष्णं द्विषतोऽपि सिद्धि:।

यां योगिन: संस्पृहयन्ति सम्यग्,

योगेन कस्तद्विरहं सहेत ।।19।। स्कं 3, अ. 2

उद्धव जी ने भगवान के सम्पूर्ण बाल लीलाओं में किये गये अपूर्व अद्भुत कार्यों का वर्णन करते हुये विदुर जी को मैत्रेय ऋषि के पास जाने के लिये कहा। यहाँ असंबद्ध रूप से दु:खी मना उद्धव जी योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण के बाल चरित्रों में प्रकट योगैश्वर्य का विवरण देते हैं। भगवान का विछोह उद्धव जैसे ज्ञानी को भी विरह व्यथा में डुबो दिया है। वे स्वयं भगवान श्री कृष्ण द्वारा उपदेशित हुये थे। भगवान ने उद्धव से कहा था कि तुम पूर्वजन्म में वसु थे। तुम मेरे साहचर्य हेतु उस जन्म में कठिन साधना किया था। उद्धव संसार में तुम्हारा यह अंतिम जन्म है। अब तुम मेरे धाम बदिकाश्रम चले जाओ। अब वहीं निवास करना। उद्धव जी प्रभु के आदेश से बदिकाश्रम में जाकर समाधि योग द्वारा उनकी आराधना करते हैं –

एवं त्रिलोकगुरुणा सन्दिष्ट: शब्द योनिना।

बदर्याश्रममासाद्य हरिमीजे समाधिना ।।32।। स्कं 3, अ. 4

आत्मज्ञान हेतु संसार से वैराग्य होना आवश्यक है। धीर पुरुष चित्त निरोध रूप समाधि के बल से भगवान की माया को (प्रकृति को) जीतकर भगवान में ही लीन हो जाते हैं, इसमें अधिक श्रम बताते हुये भक्तियोग की महत्ता और सरलता का प्रतिपादन किया गया है –

तथापरे चात्मसमाधियोग –

बलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम्।

त्वामेव धीरा: पुरुषं विशन्ति

तेषां श्रम: स्यान्न तु सेवया ते ।।46।। स्कं 3, अ. 5

स्कन्ध तीन अध्याय छ: में मैत्रेय ऋषि के पास गंगा द्वार विदुर जी पहुँच कर आत्मज्ञान हेतु जिज्ञासा करते हैं। मैत्रेय ऋषि ने भी प्रथमतया विराट रूप प्रभु की उत्पत्ति का वर्णन तत्व रूप

से करते हैं। यहाँ जल के भीतर हिरण्यमय अण्ड रूप का वर्णन किया गया है। यही विश्व रचना का सात्विक गर्भ, ज्ञान, क्रिया, आत्मशक्ति से सम्पन्न था। इनसे ही सम्पूर्ण विश्व का उद्‌भव हुआ है। चारों वर्ण अपनी अपनी वृत्तियों के सहित इनसे ही उत्पन्न हुये हैं। यह विराट पुरुष काल, कर्म, स्वभावशक्ति से युक्त भगवान की योगमाया के प्रभाव को प्रकट करता है। इनके स्वरूप का सम्पूर्णता से वर्णन करना सम्भव नहीं है।

मैत्रेय ऋषि ने अन्त में विदुर जी से बोले–मेरा क्या कहना जबकि श्री ब्रह्मा जी ने एक हजार दिव्य वर्षों तक अपनी योग–परिपक्व बुद्धि से विचार करने पर भी भगवान के अमित महिमा का पार न पा सके –

आत्मनोऽवसितो वत्स महिमा कविनाऽऽदिना।
संवत्सरसहस्रान्ते धिया योगविपक्कया ।।38।। स्क.3, अ.6

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यपूजाव्यातक्रम:।
त्रीणि तत्र प्रजायन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयं।।

(स्कन्दपुराण मा.के.3/48)

जहाँ अपूज्य व्यक्तियों का पूजन होता है और पूज्य व्यक्तियों का तिरस्कार होता है, वहाँ तीन बातें अवश्य होती हैं – अकाल, मृत्यु और भय।

मामेकं शरणं व्रज

– पं. कृष्ण कुमार पाण्डेय, प्रवक्ता, गोरखपुर

महाराज भर्तृहरि ने अपने ' नीतिशतक ' के द्रव्य प्रशंसा में लिखा है कि –

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः।
स पण्डिताः स श्रुतवान्गुणज्ञः।।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः।
सर्वेगुणा काञ्चन माश्रयन्ते ।।

" **जिसके पास धन है, वही कुलीन है वही पण्डित वही विद्वान और गुणी है, वही वक्ता और दर्शनीय है, अर्थात् सभी गुण सोने में रहा करते हैं।** " भर्तृहरि जी ने कलियुगी धर्म को बताया है। हम सब कलियुगी जीव विभिन्न बाह्याडम्बर से युक्त हैं। इसी में अपना पुरुषार्थ लगाकर व्यर्थ का समय नष्ट कर रहे हैं। यद्यपि इससे (कलिधर्म) हम बच भी नहीं सकते हैं। फिर भी यदि योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण के उपदेश को हृदयंगम करें, जिसमें उन्होंने कलियुगी जीव को अपने स्वयं के शरण में आने को कहा है। भगवान का शरण जीव को कब प्राप्त होगा ? जब वह भय, लज्जा, बड़ाई, आसक्ति, शरीर एवं संसार से अहंकार एवं ममता रहित होकर केवल परमात्मा को ही अपना आश्रय समझे। उन्हीं का अहर्निश चिन्तन करता रहे तो भगवान सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर देंगे। भगवान इसे पूरी दृढ़ता से उपदेशित कर रहे हैं। ऐसा दृढ़निश्चय होकर वह अर्जुन के माध्यम से सम्पूर्ण जीव को अपनाने की बात करते हैं। किन्तु जीव इतने दृढ़निश्चय के साथ शरण में जाने को तैयार नहीं है। क्योंकि वह कलिधर्म से ग्रस्त है। भगवान ने पुनः जीवों को सम्बोधित करते कहा कि –

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः।।

अर्थात् भगवान ने उपदेशित किया कि मेरे उपदेश जो रहस्य से युक्त है, भक्तों को बतायेगा, वह मुझको ही प्राप्त होगा। वह मुझ में ही लीन हो जायेगा। इसमें कोई संशय नहीं है।

सम्पूर्ण गीता को उपदेशित करने के बाद योगेश्वर भगवान ने कहा – हे कुन्ती पुत्र संक्षेप में ज्ञानयोग की पराकाष्ठा तथा निष्काम कर्म करते हुए मनुष्य ब्रह्म को प्राप्त कर लेगा। ऐसा पात्र व्यक्ति कौन है ? उसके बारे में कहा –

बुद्धया विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ।
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा राग द्वेषौव्युदस्य च ।।
विविक्त सेवी लघ्वासी यत वाक्काय मान सः ।।

ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ।

अहकारं बलं दर्प कांम क्रोधं परिग्रहम् ।

विमुच्य निर्मम:शान्तो ब्रह्म भूयाय कल्पते ।।

अर्थात् हे अर्जुन विशुद्ध बुद्धि से युक्त हल्का तथा सात्त्विक और नियमित भोजन करने वाला, शब्दादि विषयों (वाणी से किसी को किसी भी प्रकार से कष्ट न देना) का त्याग, एकान्त और शुद्ध देश (स्थान) का सेवन करने वाला, सात्त्विक धारणशक्ति , अन्तकरण और इन्द्रियों का सयम करके, मन, वाणी और शरीर को वश में करने वाला, राग द्वेष से रहित, दृढ़वैराग्य का आश्रय करने वाला, अहंकार, बल का घमण्ड, काम क्रोध और परिग्रह का त्याग करके सदैव ध्यानयोग में परायण रहने वाला, ममता रहित, शान्ति चित्त वाला पुरुष परब्रह्म मे बिना भेद के स्थित होने वाला, साधक ही योग्य होता है। क्योंकि ध्यान योगी न तो किसी के बारे में किसी भी प्रकार का शोक नहीं करता है। वह किसी से आकाङ्क्षा भी नहीं रखता है। वह समस्त प्राणियों में समभाव रखता है। ऐसा ध्यान योगी परमात्मा को प्राप्त करता है। पुनः भगवान अर्जुन से कहते हैं कि –

चेतसा सर्वकर्माणि मयि सन्न्यस्नत्य मत्परः।

बुद्धि योगमुपाश्रित्यमच्चिन्त: सततं भव ।।

अर्जुन अपने सब कर्मों को मुझेअर्पण कर दो तथा मेरा योगयुक्त होकर अवलम्बन कर। जीव के लिए भगवान ने सबसे सरल उपाय बताया कि– जीव अपने समस्त कर्मों को मुझे सौप दें। तात्पर्य यह कि व्यक्ति को कभी भी मन में यह नहीं लाना चाहिए की भौतिक जगत में मेरा भौतिक कार्य है मुझे करना है। इससे अहंकार की प्रवृत्ति जागृत होती है। भौतिक कार्य से तात्पर्य भौतिक कामनाएँ जैसे – अपने बालकों को शिक्षित करना, शादी, विवाह, मकान, दुकान तथा अन्य तृष्णाएँ।

इस असार संसार में जीव का कोई कर्म ही नहीं है। समस्त कर्म पूर्व निर्धारित है। वह उपयुक्त समय के अनुसार होता रहेगा। व्यक्ति जब अपना कोई कर्म माने ही नहीं तो इससे अहकार की वृत्ति नहीं उठेगी। इसीलिए भगवान ने अर्जुन से भी कहा कि तुम यह अहंकार मन में मत पाले कि मैं युद्ध नहीं करूँगा। यह मिथ्याभिमान है। क्योंकि तुम्हारा स्वभाव बलात् युद्ध में लगा देगा। तेरा युद्ध का कर्म उसी प्रकार है, जैसा मैं कह रहा हूँ –

ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशेऽर्जुन तिष्ठति।

भ्रामयन्त्रसर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मामया।।

अर्थात् अर्जुन शरीर रूपी यन्त्र में आरूढ़ समस्त जीव में परमेश्वर अपनी माया से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण कराता हुआ, उसके हृदय में स्थित है। वह समस्त कर्म कराता चला जायेगा। भगवान ने अत्यन्त दृढ़ता से कहा कि – तुझे युद्ध रूपी कर्म करना ही पड़ेगा। इसी प्रकार जीव भी अपने कर्मों के अधीन होकर समस्त कर्म को करता रहता है। वे कर्म पूर्व

निर्धारित है। इसलिए अर्जुन इस गोपनीय ज्ञान को प्राप्त कर तू भली भाँति विचार कर। यद्यपि तू मेरा भक्त है, फिर भी मेरा भक्त बन कर मेरा पूजन कर। इससे तू मुझे ही प्राप्त होगा। ऐसा मेरा दृढ़ निश्चय है। इसीलिए अपने सम्पूर्ण कर्त्तव्य कर्मो को मुझमें त्यागकर मेरी शरण ग्रहण कर। मैं तुझे समस्त पापों से मुक्त कर दूँगा। हमारा तुम्हारा यह संवाद अति गोपनीय है। फिर भी लोक कल्याण हेतु इस गोपनीय को तुम्हें बताया है। फिर भी जो जीव लोक कल्याण हेतु इसे धारण करेगा, वह भी कल्याण का भागी होगा। भगवान ने कहा –

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।

ज्ञान यज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥

अर्थात् **" हे अर्जुन जो जीव हमारे और तुम्हारे धर्मयुक्त संवाद रूपी गीता को पढ़ेगा। उसके द्वारा मैं ज्ञान यज्ञ से पूजा जाऊँगा। ऐसा मेरा मत है। "** भगवान ने समस्त मानव जाति को उपदेशित कर कहा कि –

श्रद्धावान नसूयश्च श्रृणुयादपि यो नरः।

सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्य कर्मणाम् ॥

भगवान ने कहा कि– जो व्यक्ति श्रद्धा से, दोष दृष्टि से रहित होकर इस गीता का श्रवण भी करेगा। वह भी पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वालों के श्रेष्ठ लोकों ही को प्राप्त करेगा। भगवान ने अर्जुन से प्रश्न किया कि – क्या तूने एकाग्र चित्त से गीताशास्त्र को सुना है ? उत्तर में अर्जुन ने कहा – हे अच्युत आपके ज्ञान से मेरा मोह नष्ट हो गया। मैं संशय रहित हो गया हूँ। अतः आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। निश्चय ही जीव की समस्या अर्जुन के जैसी ही है। जीव ने संशय ग्रसित, मोह एवं व्यर्थ के अज्ञान से भ्रमित होकर स्वयं निराशा पाल रखा है। जबकि हमारे शास्त्र में कहीं भी निराशा, संशय एवं मोह रूपी जकड़न नहीं है। हमारी अज्ञानता ही मोह पाश का कारण है। यदि व्यक्ति सदैव गीता के इस श्लोक को हृदय में धारण करे तथा स्वयं को उनके साथ सदैव देखे तो वह कभी भी अज्ञानता में नहीं पड़ेगा –

यत्रयोगश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।

तत्र श्री र्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्भम ॥

ध्यान योग विज्ञान से अभीष्ट कार्यों की सिद्धि

श्री गुरुदेव भगवान बताया करते थे कि श्री मुल्खराज जी महाराज और ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी महाराज के स्वभाव में बहुत अन्तर था। श्री मुल्खराज जी महाराज कुछ क्रोधी स्वभाव के थे जबकि श्री गोपालानन्द जी महाराज शान्त प्रकृति के योगी थे। श्री मुल्खराज को जब कोई कार्य कराना होता था तो वे मूलाधार कमल में स्थित होकर सिद्धि को अपने कार्य की पूर्ति के लिये आज्ञा दिया करते थे। इस प्रकार से श्री प्रभु जी की कृपा से उनका अभीष्ट कार्य हो जाया करता था। श्री ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी महाराज के लिये श्री प्रभुजी की आज्ञा थी कि वे सहसार कमल में मणिकर्णिका में स्थित होकर गुरुदेव से प्रार्थना करके कार्य सिद्ध कर लिया करते थे। इस सम्बन्ध में एक घटना सुनाया करते थे वह इस प्रकार है – " श्री प्रभु जी का एक बालक लाहौर में प. नन्दलाल के नाम से रहता था। एक बार उसके मृत्यु का समय निकट आ गया। घर के सभी लोग बैचेन हो गये। श्री ब्रह्मचारी जी ध्यान में बैठ गये और सहसार में मणिकर्णिका में स्थित होकर श्री प्रभुजी से नन्दलाल के दीर्घ जीवन के लिये प्रार्थना की। ध्यान से उठने के बाद श्री गोपालानन्द जी महाराज ने परिवार जनों से कहा – हम ऋषिकेश श्री प्रभु जी के पास जा रहे हैं, जब तक मैं न आऊँ तब तक तुम इनकी देख भाल करते रहना। घर वालों ने तो उन्हें जमीन पर लिटा दिया था। उनके मत में तो शरीर छूट चुका था। श्री ब्रह्मचारी जी ऋषिकेश में योग साधन आश्रम पहुँच गये और श्री प्रभु जी से सारी घटना बतादी और विनयपूर्वक नन्दलाल के जीवन के लिये प्रार्थना करने लगे। उनके बार–बार आग्रह को देखकर श्री प्रभु जी ने उनसे कहा – अच्छा ! तुम मेरे कमरे को तब तक बन्द रखना जब तक मैं इसे खोलने को न कहूँ। हमारे गुरुदेव जी भी उस समय वहाँ आश्रम में विराजमान थे। श्री गोपालानन्द जी कमरे के बाहर ही बैठे रहे। जो कोई शिष्य दर्शन को आगे बढ़ता वे कह उठते – अभी श्री प्रभु जी नन्दलाल का काम कर रहे हैं। उनकी आज्ञा है कि कमरा बन्द रखा जाये। दो घन्टे के बाद श्री प्रभु जी ने कमरा खोलने के लिये कहा – कमरा खोला गया और श्री प्रभु जी बाहर आ गये और कहने लगे – अब तुम लाहौर चले जाओ वहाँ तुम्हें नन्दलाल खाता–पीता मिलेगा। ऐसा ही हुआ। पं. नन्दलाल बिलकुल स्वस्थ थे। इसके बाद तीस चालीस वर्ष तक जीवित रहे। सन् 1976–77 में दिल्ली में उनका शरीर पूरा हुआ। एक और घटना ब्र गोपालानन्द जी से सम्बन्धित है। हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर श्री प्रभु जी के सभी शिष्य

अपने बड़े गुरु भाई श्री हरिहरानन्द जी के दर्शनों के लिये श्री प्रभु जी से प्रार्थना करने लगे। हरिहरानन्द जी भूतजयी सिद्ध हैं। श्री प्रभु जी ने कहा – उसका यहाँ आना ठीक नहीं है किन्तु सभी के हठ करने पर श्री प्रभु जी ने गोपालानन्दजी से ध्यान द्वारा बुला लेने की आज्ञा दी। ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी ने ध्यान से सहस्त्रार कमल पर समाधिस्थ होकर हरिहरानन्द जी को श्री प्रभु जी की आज्ञा बता दी। योगी हरिहरानन्द जी प्रभु जी की आज्ञा पाकर नैपाल में स्थित शीशागिरी पहाड़ से नीचे उतर कर हरिद्वार की ओर चल पड़े। रास्ते में नग्न शरीर देखकर किसी क्षत्रिय ने इन्हें झगड़ते हुये डण्डा मार दिया। ये क्रुद्ध हो गये। उन्हें शाप देकर पृथ्वी पर गिरा दिया। उसका प्राणान्त हो गया। इधर श्री प्रभु जी हरिद्वार में भोजन कर रहे थे। भोजन करते – करते अचानक बोले," अरे,अरे,अनर्थ हो गया। हरिहरानन्द ने एक व्यक्ति को शाप देकर मार दिया है। उसे कहो, वहीं से वापिस हो जाये। " किसी साधक को भेज कर वापिस भिजवा दिया। इस प्रकार गोपालानन्द जी महाराज अपने कार्य सिद्धि के लिए सहसार में जाकर गुरुदेव की आज्ञा से अभीष्ट कार्य करा लिया करते थे।

" हम हिन्दुस्तान को सुखी और समृद्धिशाली बनाने की बात रोज करते हैं। पर जब तक प्रत्येक व्यक्ति " पहला सुख निरोगी काया " प्राप्त नहीं करता, स्वास्थ्य के सिद्धान्तों का अध्ययन करके उनका व्यवहार नहीं किया जाता, तब तक व्यक्ति या समाज की किसी उन्नति की ओर प्रगति नहीं हो सकती। "

श्री मानक चन्द पर अहैतुकी कृपा

– श्री जगदीश राए बंसल 'अधम'

काल चक्र, युग चक्र, और जग चक्र को एक साथ चलाने वाले, हमारे आपके और प्राणी मात्र के तारण हार सदगुरु देव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज, किस समय, किस स्थान पर और किस भाग्यशाली के कलिष्ट संस्कारों का भुगतान यों चुटकी मे निपटा दे, यह समझना अच्छे से अच्छे साधक की बुद्धि से परे की बात है। अपने भाग्य विधाता जी जिस प्रकार से अपने भौतिक शरीर के रहते अपने अशरण–शरण आए भक्तों के कष्ट निवारण किया करते थे, उसी प्रकार आज भी उसी गति से सभी जनों के कष्टों का निवारण कर रहे हैं। किसी का प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होकर, किसी का साधू या मौलवी या दरोगा या न्यायाधीश या सर्जन के रूप में पधार कर, अथवा किसी को स्वपन देकर, किसी को अनुभूति देकर अथवा किसी को निज मुखार विन्द से आदेश देकर अपने लाडलों को निहाल कर देते है।

ऐसा ही यहाँ प्रस्तुत एक कृपा प्रसंग सन 2009–10 का है। इससे पहले यहाँ सवाई आश्रम की चहल–पहल से अवगत कराता चलूँ कि यहाँ गुरु पूर्णिमा का पर्व दिनाक 12 जुलाई 2014 को धूम–धाम से सम्पन्न होने के एक दिन पश्चात् अर्थात 14 जुलाई से 24 जुलाई तक योगाचार्य श्री दासलाल जी महाराज द्वारा वार्षिक अनुष्ठान रुद्राभिषेक का शुभ आयोजन किया गया। इस ग्यारह दिवसीय समारोह में देश भर के कोने–कोने से पधारे सैंकड़ों गुरु भाई–बहिनों का योगदान एवं उत्साह चरम सीमा पर रहा। वेद विद्यालय कर्णवास बुलन्दशहर के वेदाचार्य श्री बैकुण्ठ शर्मा जी सहित इक्कीस वेद पाठियों एवं विद्यार्थियों द्वारा ग्यारह दिनों तक आश्रम को वेद मन्त्रों से गुंजायमान किए रखा। तीन पारियों में छः घन्टे दैनिक पूजा–अभिषेक एव साधना का लाभ अनेक साधकों ने उपवास रख कर उठाया। नाश्ता एवं फलाहार भोजन आश्रम में ही सुलभ था। इस विशाल अनुष्ठान के कार्य की जो गति/शैली थी, लगता था स्वयं ऋद्धि–सिद्धियों द्वारा ही सञ्चालित है।

अनुष्ठान से प्रभावित इन्द्र देव महाराज अपनी प्रसन्नता रह–रह कर बिखेरते रहे, वहीं सूर्य नारायण भगवान की प्रातः कालीन आभा से आश्रम मुस्करा उठता। या यों समझिये कि –

इन्द्र ने हमको अमृत का जाम भेजा है।
सूर्य ने तो गगन से सलाम भेजा है।।

शीतल मन्द वायु–कूकती कोयल–नाचते मयूर–चहचहाते पक्षी शायद गुरुदेव को ही रिझा रहे है। इस रुद्राभिषेक में महत्व की बात यह रही कि इतना कार्य भार होते हुए भी परम पूज्य श्री दास लाल जी महाराज अपने गुरुदेव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज की तर्ज पर ही मन मस्त शान्त, समस्याओं से बेखबर, प्रसन्न मुद्रा में ही दिखते रहें। दूसरी तरफ अखरने वाली यह बात रही कि अखिल ब्रह्माण्ड नायक जगत नियन्ता, ज्योति स्वरूप, प्रभू रामलाल जी महाराज एवं प्रात:

स्मरणीय, अनन्त विभूषित, गुरुदेव योग योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी महाराज, साधकों से अन्तर्धान ही रहे, और आखें तरसती ही रह गई।

गुरु देव तुम्हारे दर्शन की म्हारे दिल में ललक सी रहती है।

बार–बार नयन बिछाए, नहीं दर्श कर पाती हैं।

आईए, अब अपने प्रसंग पर लौटते हैं। आश्रम में व्यवस्था के चलते अमूल्य क्षणों में से जरा समय निकाल कर आश्रम निवासी 73 वर्षीय आदरणीय गुरुभाई श्री मानक चन्द शर्मा ने बताया कि गुरु कृपाओं से तो पूरी रामायण भरी है, परन्तु इस समय एक गुरु कृपा बताता हूँ कि यहाँ से लगभग 40 कि.मी. दूरी पर हमारी कृषि भूमि है। उस भूमि को मैंने अपने भतीजे को साझे पर दिया था। कुछ दिन तो सब कुछ ठीक–ठाक चला, मगर शीघ्र ही मेरे भतीजे ने साझा देना बन्द कर दिया। भूमि का मालिकाना हक अपने पक्ष में करने लगा। सन् 2009–10 में जब मैं पिछले छ: वर्षों का हिसाब लेने गया तो उसने अकड़ के साथ मुझे अँगूठा दिखा दिया। मेरा रोम–रोम चिन्ता ग्रस्त हो गया। मेरे पास न वकील – न दलील – न अपील। क्या करूँ ? आश्रम पहुँच कर मैंने सारी दासतां श्री चरणों में कह सुनाई।

एक भरोसो एक बल–एक आस विस्वास।

एक राम घनश्याम हित–चातक तुलसी दास ।।

एक सायं जब मैं आरती में खड़ा था तो मेरे मन को यही चिन्ता डायन घायल किए जा रही थी कि :–

क्या होगा प्रभू क्या होगा – मेरी जिन्दगी का क्या होगा ?

जमीं मिलेगी क्या मुझ को – या बे मौत ही मरना होगा ?

आ गई लहर शिवा के मन में – आरती की समाप्ति पर महासिद्ध आशुतोष भगवान गुरु देव श्री चन्द्र मोहन जी महाराज के दिव्य स्वरूप से मुझे गुरु वाणी सुनाई दी कि :– लल्ला तुम्हारे साथ में जो खड़ा है, उससे बात करो.........। मैं गुरू वाणी को पहचानता हूँ, झट उस भाई की तरफ देखा। मगर मुझे लगा कि ये बिहार से लगते हैं। यू. पी. में मेरी क्या सहायता करेंगे। लेकिन गुरु आज्ञा शिरोधार्य कर मैं उसे आदर सहित अपने कमरे पर ले गया और सारी पीड़ा कह सुनाई। वह प्रिन्सीपल साहिब थे। उन्होंने मेरी बातें तो ध्यान से सुनी परन्तु बोले कुछ नहीं। मात्र मेरा मो. नं. लिया और चल दिए।

आज भी तेरा आसरा – कल भी तेरी आस ।।

घड़ी घड़ी तेरा आसरा – रहता ही तेरे पास ।।

तीसरे दिन प्रिन्सीपल साहिब का फोन आया कि मेरी बुआ का लड़का मुख्य मन्त्री का चीफ सैकट्री है, आप सारा मामला लिख कर उसे लखनऊ दे आईए। तथास्तु। मैं बिना विलम्ब किए लखनऊ जा कर सारा रिकार्ड दे आया।

सुनते हैं तेरी रहमत – दिन रात बरसती है।

तेरी एक मुस्कां से – मेरी तकदीर बदलती है ।।

गुरु चरणों से निकली आशा की यह किरण मुझे मोहने लगी। फिर एक दिन हाथरस से एस.डी.एम. महोदय का फोन आया। बोले, " **सर** " आप एम.सी.शर्मा बोल रहे हैं। मैंने हाँ में उत्तर दिया। आगे बोले, श्रीमान जी – आपने हमारी शिकायत ऊपर कर दी। कृपया आप हाथरस आईए और हमसे मिलिए।

गुरु मेहर बान तो चेला पहलवान

क्योंकि –

पहले मैं मजबूर था – अब हजूर हो गया
पहले काँटों का भाड़ था – अब खजूर हो गया।

अरे :–

ना मैं फरिश्ता – ना मैं परवर दिगार
बस गुरु चन्द्र मोहन का करिश्मा हो गया ।।

मैं दो तीन दिन पश्चात एस.डी.एम. साहिब से मिला। उसने स्थानीय तहसीलदार साहिब और एक पटवारी को अपने पास बुलाया तथा आत्मीयता से आदेश दिया कि इन शर्मा जी को इनकी भूमि का मालिकाना हक दिलवाओ एवं पिछला बकाया राशि दिलवाओ। वहाँ से लौट कर मुझे रिपोर्ट करो। हम सब गाँव में गए। पंचायत हुई, मेरा भतीजा बुलाया गया। आनन फानन में मुझे मेरी भूमि दिलवाई गई तथा पिछली छः वर्षो की बकाया रकम दिलवाई गई। बाबू जी ! नाक तो अपनी जगह रहेगी ना।

दुर्गम वनों में मार्ग बना देती है तेरी कृपा
तिमिर में दीपक जला देती है तेरी कृपा

अब पटवारी जी ने अपनी सरकारी मूछों के रुआब से मेरी भूमि एक स्थानीय ठाकुर को साझे पर दे दी। गुरु कृपा से आज तक मुझे कोई शिकायत नहीं है। भाई जी –

हम चुपके से फरियाद किया करते हैं
हम हर पल गुरु को याद किया करते हैं
हम ही नहीं घर के सभी कहा करते हैं
हम नींद में भी गुरु का नाम लिया करते हैं।

क्योंकि :–

ये तन विष की बेलरी – गुरु अमृत की खान।
शीश दिए ऐसे गुरु मिलें, तो भी सस्ता जान ।।

योग-आसन

वातायनासन

विधि

इस आसन के करने की विधि वृक्षासन से बिल्कुल मिलती जुलती ही है। केवल इतना अन्तर है कि अपना दाहिना पैर जो मोड़ कर बायें पैर की जंघा पर जमा कर रखा हुआ है, उसके घुटने को नीचे को बढ़ा कर बायें पैर के ग्रन्थी स्थान (गुल्फ) टकनों पर जमा कर हाथ जोड़ कर खड़े रहें। बायाँ पैर घुटने में से थोड़ा झुक जायेगा। इस आसन को वातायन आसन कहते हैं।

वातायनासन

समय – साधारण वृक्षासन की ही तरह 1 मिनट से आरम्भ करके 2 या 3 मिनट तक पैरों को बदल-बदल कर, कर लेना चाहिए।

लाभ – आरोग्यता बढ़ती है। वायु निस्तरण होकर कोष्ठबद्धता में लाभदायक है। वीरता भाव पुष्ट होते हैं।

तुम किसी की सहायता नहीं कर सकते, तुम्हें केवल सेवा का अधिकार है। प्रभु की संतान की, यदि भाग्यवान हो तो, स्वयं प्रभु की ही सेवा करो। यदि ईश्वर के अनुग्रह से उसकी किसी संतान की सेवा कर सकोगे तो तुम धन्य हो जाओगे। अपने को ही बहुत बड़ा मत समझो। तुम धन्य हो, क्योंकि सेवा करने का तुम्हें अवसर मिला है, और दूसरों को नहीं मिला। यह सेवा तुम्हारे लिए पूजा तुल्य है।

– स्वामी विवेकानन्द

दाता आयेंगे घर तेरे

– श्री विजय शर्मा, सहारनपुर

दाता आयेंगे घर तेरे, द्वार खुला रखना
मन मन्दिर में श्रद्धा दीप को जलाये रखना

सृष्टि तो बस एक सपना है
सृष्टि विधाता अपना है
भूल क्यूँ बैठा जग में आके घर अपना
दाता आयेंगे...........

पंच तत्व की काया है
घेरे तुझे जग माया है
गुरु रूप में आया जग में प्रभु अपना
दाता आयेंगे...........

सांसे जो तेरी चलती हैं
कृपा प्रभु की बहती है
सांसो की लय पे तू नाम प्रभु का जपना
दाता आयेंगे...........

सत्य का अर्थ समझ लेना
समता का भाव जगा लेना
दिव्य योग साकार करेगा तेरा सपना
दाता आयेंगे...........

प्रभु जी योग के दाता हैं
प्रभु चन्द्र भाग्य विधाता हैं
सिद्ध गुफा पे शीश झुकायें सब अपना
दाता आयेंगे...........

सेवा प्रभु को भा गई है
विनती को तेरी सुन ली है
हृदय कमल में अपने प्रभु को बिठाये रखना
दाता आयेंगे...........

शिवलीन अवधूत

– श्री कृपालानन्द जी

(पिछले अंक का शेष)

श्री प्रभु जी से कृपालानन्दजी ने कहा – तीन दिन तक यह अपने किये का आनन्द भोगेगा। तीन दिन बाद होश आते ही हीरागिरि बोला – हम अब इस दुष्ट कृपालानन्द की अपने योग बल से खबर लेंगे और चुपचाप नित्य की भाँति कन्दमूल बना कर तैयार किये। मध्यान्ह होने पर अवधूत श्री कृपालानन्दजी आये और हँसकर बोले – कहो हीरागिरि अभी कुछ और मन में है। श्री प्रभुजी हँस पड़े तो अवधूत कहने लगे– अब यह योग बल से हमें बदला देगा। हम उस समय भी इसकी खबर लेंगे। तत्पश्चात् कन्दमूल का भोजन करके तीनों व्यक्ति बैठ कर चर्चा करने लगे।

उस समय हीरागिरि अपना अपमान समझ कर बहुत ही क्रोध में बैठा था। उसी दशा में उसने विचार किया आज अब यह अवधूत ध्यानस्थ होगा उसी समय जाकर इसका मुख कालिख से काला करूँगा। कृपालानन्द जी पूर्ण योगी थे, तत्काल उसके मन का विचार जान गये और वहीं समाधि लगा कर बैठ गये। दोनों हाथों को कालिमा से काला करके जैसे ही वह उनकी ओर बढ़ा तब उनके आसन के नीचे से ततैये निकल कर हीरागिरि के मुख को चिपट गई। उनसे बचने के लिये अनजाने ही उसने अपने दोनों काले हाथों को अपने मुख पर ही लगा लिया। फलतः कृपालानन्द जी के बजाय उसका स्वयं बड़ा ही मुख काला हो गया। श्री कृपालानन्द जी की इन चमत्कारिक शक्तियों को देख कर हीरागिरि कुछ भयभीत सा हो गया, परन्तु प्रतिशोध की भावना उसके मन से न निकल सकी।

एक दिन श्री प्रभु जी के निवास–स्थान पर हीरागिरि, कृपालानन्द और कृपालानन्द की अंग्रेज शिष्या सब एकत्रित थे। हीरागिरि कहने लगा अवधूत जी आप का तन तो अति कृश है। हमें तो आप से एक कार्य कराना था। कृपालानन्दजी बोले–निस्संकोच कहो क्या काम है ? हीरागिरि बोला–हम चाहते हैं कि इस ब्रह्मचारी (प्रभुजी) की शिला यहाँ से उठा कर हमारे स्थान पर ले जाकर रख दी जाती तो बड़ा अच्छा होता। वहाँ से हीरागिरि का स्थान दो मील दूर था और शिला का वजन सैकड़ों मन था। तत्काल कृपालानन्द जी ने अपनी अंग्रेज शिष्या को आज्ञा दी–जाओ, यह शिला उठा कर वहाँ रख आओ। आज्ञा पाकर वह देवी कृपालानन्द जी की परिक्रमा करके एवं चरण कमलों में प्रणाम करके उस शिला पर सिद्धासन से बैठ गई। थोड़ी देर में ही वह शिष्या शिला सहित आकाश मार्ग से जाकर यथा–स्थान शिला को रखकर आकाश मार्ग से ही वापिस आ गई। आकर अपने गुरुदेव को प्रणाम करके बैठ गई। इस चमत्कार को देख कर हीरागिरि बहुत लज्जित होकर कृपालानन्द जी का मान करने लगा।

अवधूत कृपालानन्द जी पूर्ण योगिराज थे, और भगवान सदाशिव में लीन रहने के कारण उन्हीं के सदृश शक्ति सम्पन्न रहते थे। युक्त योगियों की श्रेणी में आदर्श स्थान रखते थे। आनन्दकन्द श्री प्रभुजी से वह मित्रता का नाता मानते थे।

सवाँई के चमत्कारिक चरित्र

सद्‌गुरुदेव योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलालजी महाराज की अनुकम्पा से मुझे सवाँई गाँव में निवास करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह छोटा सा गाँव कितना बड़ा भाग्यशाली है ? इसका वर्णन करना लेखनी से बाहर है। सवाँई बहुत छोटा सा गाँव है। इसकी जनसंख्या दो या तीन हजार से अधिक नहीं है किन्तु फिर भी इसमें बड़े-बड़े आदमियों का निवास है। इस गाँव के बाशिन्दे अच्छे ऊँचे-ऊँचे कर्मचारी है। पोस्ट ऑफिस, टेलीफोन व बिजली का सुप्रबन्ध है। सबसे बड़ी सौभाग्य की बात तो यह है कि इस गाँव की पवित्र भूमि में नेपाल हिमालय से लौटकर योग योगेश्वर सद्‌गुरुदेव प्रभु श्री रामलालजी महाराज ने कुछ समय यहाँ निवास किया था। मन को बड़ा आश्चर्य होता है, कहाँ सिद्धो से सेवित हिमालय जिसमें हजारों वर्षों की उम्र वाले तत्त्व विजयी सिद्ध योगीराज लोग निवास करते है। कहाँ यह एक साधारण सा गाँव, जहाँ श्री प्रभुजी ने आकर निवास किया था। यद्यपि श्री प्रभु जी की समस्त जीवन कथाओं का संग्रह करना साधारण कार्य नहीं, क्योंकि उन्होंने एक ही समय में अनेक स्थानों पर कितने ही अद्‌भुत चरित्र किये। अपनी करुणा-कृपा से सैकड़ों को पूर्ण रूपेण कृतार्थ कर हिमालय की कन्दराओं में बिठा दिया। लाखों दु:खी प्राणियों को संकल्प मात्र से आरोग्य प्रदान किया। सभी कथाओं का संग्रह करना असम्भव नहीं, दुस्साध्य अवश्य है। किन्तु फिर भी इस छोटे से गाँव में आकर के लोकानुग्रह के लिए जो अद्‌भुत चरित्र किये, उनका यथावत साध्य संग्रह कर सर्वसाधारण के हितार्थ प्रकाशित कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

श्री प्रभुजी का जन्म पूर्वी पंजाब अमृतसर में पं. गंडाराम जी ज्योतिषी के घर में हुआ था। महामना पं. गंडाराम जी ज्योतिष के बड़े प्रकाण्ड पंडित थे। उन्होंने अपनी ज्योतिष विद्या के प्रभाव से छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों ने ऊँचा सम्मान प्राप्त किया था। श्री प्रभुजी के जन्म काल में ही उनके जन्म कालीन ग्रहों को देखकर के पंडित गंडाराम जी ने अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यह बालक कोई परिपूर्ण जन्म सिद्ध योगीराज है और कुछ समय के बाद यह हमारे पास नहीं रह सकेगा। ऐसा हुआ भी। श्री प्रभुजी के बाल्यकाल में अनेकों अद्‌भुत घटनाये घटीं। कई एक सिद्ध महात्मा भ्रमण करते हुए अमृतसर में आकर ठहर जाया करते थे। अवसर पाकर पं. गंडाराम जी के घर में श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ जाया करते थे। श्री प्रभुजी बाललीला करते हुए अपने मुखारविन्द से जो भी शब्द निकालते थे वह पूर्ण सत्य होता था। अपनी बाल्य लीला में श्री प्रभुजी कितनी ही भविष्य की बातें कह देते थे। उन सब बातों का वर्णन कर देना इस छोटी सी पुस्तिका में प्रस्तुत विषय नहीं। पं. गंडारामजी ने श्री प्रभुजी को अद्‌भुत कर्मी बालक जान करके

अपने घर रखने के लिए अनेक प्रयत्न किये। किन्तु किसी में भी वे सफल नहीं हो सके। अवसर पाते ही पंचदश वर्षीय अपनी छोटी सी आयु में ही श्री प्रभुजी अपने घर से निकल पड़े व कुरुक्षेत्र में आकर के विद्याध्ययन करते रहे। श्री प. गडाराम जी को भी कर्ण परम्परा से इनके विद्याध्ययन के लिए कुरुक्षेत्र जाने का ज्ञान हो गया। उन्होंने अपने भाइयों को भेज करके कुरुक्षेत्र से श्री प्रभु जी को अमृतसर लौटाने का प्रयत्न किया। किन्तु निष्फल रहे। अपने पिताजी की इस प्रकार की भावनाओं को देखकर श्री प्रभुजी कुरुक्षेत्र से हरिद्वार चले गये। हरिद्वार से कनखल पहुँच करके कुछ समय वहाँ अध्ययन करते रहे। किन्तु वहाँ भी प. गडाराम जी ने तीर्थयात्रा करने वालों के द्वारा पा लियो, फिर उन्होंने श्री प्रभुजी को लौटाने का पूर्ण प्रयत्न किया। प. तीर्थराम आदि श्री प्रभुजी के सहोदर भाइयों को भेजा, किन्तु इनमें से कोई भी श्री प्रभुजी के विचारों को न बदल सका और सब निष्फल होकर लौट आये। अपने लक्ष्य साधन में श्री प्रभुजी ने इन सब बाधाओं को जानकर कनखल विद्यालय को भी छोड़ दिया। पूर्ण विरक्त भाव से इतस्ततः वनों में विचरने लगे। वनों की ओर तीर्थों की काफी दिनों यात्रायें कीं। श्री प्रभुजी के हृदय में तीव्र लगन थी कि वह हिमालय जाकर के उसकी कन्दराओं में रहने वाले योगियों की खोज करें व पूर्ण सद्गुरु को पाकर के योग–विद्या में परिपूर्णता को प्राप्त कर सकें।

योगियों का अन्तर्धान

जब योगी शरीर के रूप में संयम करता है तब उसके शरीर के रूप की ग्राह्यता शक्ति स्तम्भित हो जाती है तब किसी के नेत्रों का प्रकाश उसमें शरीर को स्पर्श नहीं कर सकता, इस कारण से योगी का शरीर अन्तर्हित हो जाता है।

यह एक स्वाभाविक बात है कि नेत्र इन्द्रियों की शक्ति जब किसी कारण से प्रति बद्ध हो जाती है तब उसको सम्मुख रक्खा पदार्थ भी नहीं दीखता। जैसे इन्द्रजाल का खेल करने वाले लोग अनेक पदार्थों के संयोग और क्रिया – कौशल से दर्शकों के नेत्रों को स्तम्भित कर देते हैं ऐसे ही इन्द्र जालिक लोगों के परम गुरु योगियों का अन्तर्धान होना कुछ आश्चर्य जनक नहीं है।

प्रभुजी का - आकाश गमन

श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द में जनसमुदाय का आकर्षण दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था और सभी की यह हार्दिक भावना रहती थी कि यह कोई साधारण संत नहीं प्रत्युत लोक कल्याणार्थ आये हुये योगयोगेश्वर हैं। इनके चरित्रों को समझ लेना हर व्यक्ति के लिये सहज नहीं। इस प्रकार के मधुर भावों को हृदय में धारण करने वाले जिज्ञासु समुदाय की यह हार्दिक इच्छा थी कि श्री प्रभु जी के कृपामय चरण कमलों से हमारा कभी भी विछोह न हो। ये हमारे पास बने रहें या हमें अपने साथ ले जायें। इसी से श्री प्रभु जी का कहीं भी यातायात ये लोग देख नहीं सकते थे। अतः बहुत ज्यादा सचेत रहते थे कि ये कल्याण धन कहीं चुपचाप हम अनाथों को छोड़ न जायें। किन्तु श्री सकल कल्याण मूल श्री प्रभु जी के मन में अब वनों में जाने की तीव्र लालसा लगी हुई थी। उनकी इच्छा थी कि अब यहाँ से हट कर हिमालय चलें और वहाँ जाकर के जग-जंजाल से दूर निश्त्रैगुण्य अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित रहें। लोगों ने श्री प्रभु जी के मनोभावों को कुछ-कुछ समझ लिया था, इसलिए और भी सचेत होकर के प्रभु जी के चरण कमलों में रहने लगे। उन्हें भय था कि अनाथ नाथ हम अनाथों को छोड़कर के चुपचाप हिमालय न चले जायें।

एक दिन अवसर जान करके श्री प्रभु जी ने सभी समुदाय को आज्ञा दी कि आज सभी लोग हमारे पास से चले जायें क्योंकि हम अन्दर गुफा में जा करके समाधि लगाना चाहते हैं। वे लोग जाना नहीं चाहते थे। उनके इस आग्रह को देख करके श्री प्रभु जी ने आज्ञा दी कि अरे भाई इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो ? लो हम अन्दर गुफा में चले जाते हैं और तुम लोग अपने विश्वास के लिये बाहर की कुण्डी लगा कर ताला लगा जाओ, फिर तो हम कहीं नहीं चले जायेंगे। किन्तु यह याद रखना कि कोई भी ताला खोल कर अन्दर न आने पाये। हमारी समाधि में कोई विघ्न न हो। श्री प्रभु जी का इस प्रकार का आदेश सुन करके लोग चुप हो गये और अपना अहोभाग्य समझा कि श्री प्रभु जी यहाँ ही समाधि लगा रहे हैं और वन जाने के तीव्र विचार को हटा दिया है। लोगों ने कुटिया से ताला लगा दिया और ताला लगाने के बाद भी वे लोग गुफा के द्वार पर लेटे रहे। किन्तु उन योगेश्वर के चरित्र को यह गाँव के भोले व्यक्ति क्या समझ सकते थे। उनके लिये तो गुफा में से निकलने का यही एक द्वार था। जिससे वह ताला लगाकर बैठे हुए थे।

श्री कल्याणधन प्रभु जी गुफा में जाकर समाधिस्थ हो गये और लगभग अर्द्धरात्रि के समय अणिमा के द्वारा अपने स्थूल शरीर को अणुवत् बना करके बाहर निकल आये और आकाश मार्ग से हिमालय को चले गये। जिस समय श्री प्रभु जी ने आकाश मार्ग से गमन किया उस समय ग्राम के वासी प्राय: सो चुके थे। आश्विन का महीना था। अत: रात्रि को हल जोतने वाले लोग अपने-अपने खेतों में हल जोत रहे थे। उन्हीं में एक परम भाग्यशाली व्यक्ति ' सूखा' नाम का धीमर था। वह भी अपने खेत में हल जोत रहा था। उसकी दृष्टि आकाश की ओर उठी तो सहसा देखा दिव्य जटाधारी स्वरूप है और श्री प्रभुजी बड़ी तेजी के साथ आकाश से होते हुए जा रहे हैं। उस बेचारे भोले-भाले व्यक्ति के लिये यह पहला मौका था। वह अत्यन्त भयभीत हो गया। उसने अपने मन में विचार किया कि यह क्या बला है ? मनुष्य आकाश में उड़ता जा रहा है। मुझ पर कोई संकट आने वाला न हो या यह कोई भूत प्रेत या कोई बला न हो। इसी भय से अत्यन्त भयभीत होकर उसने हल छोड़ दिया और यह इच्छा की कि मैं शीघ्र ही दौड़कर घर चला जाऊँ। किन्तु वह दीनबन्धु जी उसकी दीन दशा को सहन नहीं कर सके और आकाश मार्ग से जाते-जाते पुन: लौटकर आ गये और आकाश में ठहर कर कहा " अरे, सूखा तु हमें पहचानता नहीं, हम गुफा वाले बाबा हैं, तू हमें बला समझता है, ऐसी बात कुछ नहीं है। चिन्ता को छोड़कर अपना हल जोत, हम वही गुफा वाले बाबा हैं। जिनके पास तू सैकड़ों बार आया-जाया करता है। अब यहाँ से गाँव में जाकर के हमारी हिमालय चले जाने की बात तुम किसी से कहना नहीं। इतने शब्द कह करके श्री प्रभु जी पुन: उसी आकाश मार्ग से हिमालय को चले गये।

उधर सूखा धीमर से न रहा गया। वह तत्काल हल छोड़कर गाँव चला आया और गाँव में आकर उसने लोगों को स्पष्ट कह दिया कि भाई आज तो गुफा वाले बाबा आकाश मार्ग से उड़ते हुए हिमालय को चले गये हैं। सूखा धीमार के मुख से निकलते ही यह बात कर्ण परम्परा से सब गाँव में फैल गयी। गाँव के लोग तत्काल दौड़े हुये आये। वहाँ पर जो लोग बाहर ताला लगा करके गुफा पर सो रहे थे उनसे उन्होंने आकर कहा कि भाई ! तुम यहाँ सो रहे हो, बाबा तो आकाश मार्ग से चले भी गये। रात्रि को उन्हें आकाश से जाते हुये सूखा धीमर ने देखा है। इन सब बातों को सुनकर लोगों ने तत्काल कुटिया का ताला खोला। किन्तु बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि भीतर से श्री प्रभु जी ने कुण्डी लगाई हुई थी। अत: कोई भी गुफा में प्रवेश न कर सका। किन्तु सभी के मन में महान कौतूहल था और यह जानने की तीव्र लालसा थी कि वह योग योगेश्वर परम पुरुष श्री प्रभु जी अभी गुफा में ही हैं या सचमुच ही चले गये हैं। अन्दर से कुण्डी

बन्द थी, इसलिये कोई उपाय नहीं सूझता था जिससे कि गुफा में प्रवेश कर सकें और यह जान सकें कि श्री प्रभु जी यहाँ हैं या नहीं।

अन्ततः सब प्रकार से विचार कर लेने के बाद यही निश्चय हुआ कि दीवार तोड़कर अन्दर घुसा जाय तभी यह निश्चय हो सकता है कि सत्य बात क्या है ? अन्ततः सूर्योदय के बाद कुटिया की दीवार को तोड़ करके एक डा. ज्वाला प्रसाद को अन्दर घुसाया। इस घटना को स्वयं अपने मुहँ से उन्होंने बताया। कुटिया की दीवार को तोड़ देने के बाद ज्वालाप्रसाद धीरे-धीरे निस्तब्ध भाव से पैरों को दबा कर गुफा में घुसे। अन्दर जाकर देखा कि श्री प्रभु जी वहाँ नहीं थे। केवल मात्र एक लोटा और एक पुस्तक रखी थी। ज्वालाप्रसाद ने बाहर आकर के सबको बतला दिया कि वह कृपानिधि जी अपने विचारानुसार हिमाच्छादित हिमालय के वनों को चले गये। हमारी तुम्हारी पाबन्दियाँ उन पर किसी भी प्रकार से सफलीभूत न हो सकीं। जिस समय यह समाचार डा. ज्वाला प्रसाद के मुख से सभी प्रेमियों ने सुना तो सभी के मन अत्यन्त व्याकुल हो उठे। अत्यन्त आर्तभाव से फूट-फूट कर रोने लगे और प्रार्थना की कि हे प्रभो ! हमारे हृदयों को आपने अपना घर बनाया है। योगेश्वर ! फिर आप दीनों की तरह से हमें छोड़कर चले गये। हम आपके बच्चे हैं। अनाथों की तरह से मारे-मारे फिरेंगे। इसलिए हे कृपा नाथ अपने दीन बच्चों की सम्हाल करो और दर्शन दो। जिस समय यह सब व्याकुल मन से अन्तर हृदय से पुकार कर प्रार्थना कर रहे थे, उसी समय गुफा के अन्दर से एक आवाज सुनाई दी और वह यह थी " भाई तुमने हमारे साथ जिद की, इसलिये ऐसा हुआ। अब डरो मत। लगभग 12 वर्ष बाद हम फिर आवेंगे। उस समय जो पहचान सको तो पहचान लेना। इस वाणी के सुनाई देने के बाद फिर कोई शब्द सुनाई नहीं दिया। सभी भक्त समुदाय अपने आर्द्रित हृदय से श्री प्रभु जी का गुणानुवाद करते हुए अपने-अपने कार्यों में लग गये।

सवाँई गाँव से जाने के बाद श्री प्रभु जी अनेकों वन्य स्थानों में घूमते हुए नैपाल पहुँचे और वहाँसे बागमती गंगा के तटों पर भ्रमण करते हुये सिद्धाश्रम को चले गये। नैपाल से ऊपर गुंजेश्वरी देवी का स्थान है। उस स्थान से कई मील आगे एक बन खण्ड में रहे और वहाँ पर बैठे हुए पूर्वानुभूत स्वयं सदासिव रूप सद्गुरु तत्व का चिन्तन करते रहे। कुछ दिन वहाँ निवास करने के बाद एक दिन अकस्मात एक वृद्ध महापुरुष वहाँ आये जिनकी आँखों की भोयें लटक कर होंटों तक थीं। मुख दैदीप्यमान था। अत्यन्त वृद्ध थे किन्तु महान तेजस्वी थे। उनके इशारे को

पाते ही श्री प्रभु जी उनके साथ चल पड़े और क्षण भर में किसी हिमाच्छादित स्थान पर जा निकले। वहाँ पर श्री प्रभु जी उन महापुरुष जी की आज्ञानुसार 12 वर्ष तक रहे। वह स्थान हिमाच्छादित था। वहाँ पर खाने को कन्दमूल फल कठिनता से प्राप्त होते थे। वह परम दिव्य स्थान था। वहाँ छः छः मील की दूरी पर ऋषियों के स्थान थे व उन सभी ऋषियों की आयु 500 या 600 वर्ष की थी। बारह वर्ष वहाँ रह करके तीव्र तपश्चर्या के बाद दीन-हीन प्राणियों के कल्याण निमित्त पुनः अवनि मण्डल पर लौटे और अपना कल्याण करने का कार्य आरम्भ किया। कई जगह आश्रमों की स्थापना की। हिमालय से लौटने के बाद श्री प्रभु जी ने अपने छिपे हुए पंडित वेश में रहने लगे। इस छिपे वेश में उन्हें कोई योगेश्वर योगिराज नहीं समझ सकता था। हिमालय से लौटने के बाद श्री प्रभु जी ने तीन प्रकार के कार्य प्रारम्भ किये और ऋषिकेश योग साधन आश्रम की स्थापना की। ऋषिकेश योग साधन आश्रम में विराजमान रह करके श्री प्रभु जी ने तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये-

(1) साध्यासाध्य सभी प्रकार के रोगों की सरल योग साधना द्वारा चिकित्सा करना व उच्चतर अधिकारियों को कायाकल्प कराना।

(2) सभी प्रकार के गुप्त योग साधनों को सरलता से सिखलाना।

(3) तीव्रतम शक्तिपात के द्वारा कुण्डलिनी प्रबोध व मन की एकाग्रता कराना।

श्री प्रभु जी का यह प्रचार हिमालय से लौटने के बाद पंजाब में जोरों से चला। बड़े-बड़े अनुभवी व्यक्ति तैयार किये जिनको योग की उच्चतम स्थितियाँ उपलब्ध हुई। किन्तु यह सब कार्य करते हुए भी श्री प्रभु जी अपने पुराने सिद्धाश्रम सवाँई गाँव का भी स्मरण कर लिया करते थे। जिस समय अपने जंगलों की कथायें श्री प्रभु जी सुनाया करते थे, उस समय कभी-कभी सवाँई गाँव का चरित्र भी सुनाया करते थे, और वह कहा करते थे कि जिला आगरा में एक सवाँई गाँव है, वहाँ हमारी गुफा बनी हुई है। वहाँ के लोग अब भी हमें बहुत याद करते रहते हैं। उन लोगों के साथ बड़ी-बड़ी विलक्षण घटनायें घटीं हैं। जब लोग पूछते कि श्री प्रभु जी यह गाँव कहाँ है और वह गुफा कहाँ है ? तो हँसकर कह दिया करते कि अभी समय नहीं आया है, समय आने पर बतलायेंगे। किन्तु ऊँचे-ऊँचे ध्यानाभ्यासी लोग ध्यान में श्री प्रभु जी से सवाँई गाँव को दिखलाने की प्रार्थना करते, तो ध्यान में दिखला दिया करते थे।

एक बार श्री प्रभु जी भ्रमणार्थ हरिद्वार गये और हर की पौड़ियों पर पहुँचे। वहाँ कई

व्यक्ति सवाँई गाँव के स्नान कर रहे थे। उनकी आकृतियों को देख करके ध्यानानुभव देखने वाले हमारे कई गुरु भाईयों ने पहचान लिया कि ये उसी सवाँई गाँव के लोग हैं, जिनका जिक्र श्री प्रभु जी अपने मुखारविन्द से किया करते हैं। यह बात विचार कर श्री प्रभु जी से प्रार्थना की कि ये लोग सवाँई गाँव के मालूम पड़ते हैं। श्री प्रभु जी ने उनकी यह बात सुनकर उस समय उनको उपेक्षित मन से किंचित तारणा से कहा कि चलो यहाँ से। श्री प्रभु जी की आज्ञा पाकर सभी भाई-बहिन शीघ्रता से चल पड़े। किन्तु मार्ग में आकर फिर प्रार्थना की कि प्रभु ! ये लोग मालूम तो सवाँई के पड़ते थे, क्योंकि ध्यान में हमने कई बार इनको देखा है। किन्तु आपने इन लोगों से आज बात नहीं करने दी। हे दीनबन्धु ! इसका क्या कारण है ? आपकी क्या कृपालीला है, समझ में नहीं आ रही है। बार-बार इसी प्रकार प्रार्थना करने पर श्री प्रभु जी ने हँसते हुए उत्तर दिया "बेटा अभी इनका समय नहीं है। उस समय तुम लोग इनसे बात भी करते तो ये लोग तुम लोगों से अच्छी प्रकार नहीं बोलते क्यों कि अभी इनका संस्कार काल नहीं है। जो प्राणी जब जिसके द्वारा आना होता है, उसी संयोग पर मेल-मिलाप हुआ करते हैं। इसलिये संस्कार काल आने पर ही इनका मिलना संभव हो सकेगा, इसलिये हमने तुम्हें रोक दिया था"।

इस प्रकार इधर-उधर प्रान्तों में प्रचार करते हुये श्री प्रभु जी एक बार आगरा पधारे और भार्गव बैंक के पास किसी स्थान पर ठहरे। वहाँ आने पर पुनः वही चर्चा चली बहुत से भाई बहिन श्री प्रभु जी के साथ थे। उन्होंने प्रार्थना की कि प्रभो ! अब आगरा आये हुए हैं, कृपा करके वह सवाँई गाँव बतला दीजिये, जहाँ आपकी गुफा बनी हुई है और वहाँ के लोगों ने आपको आकाश गमन करते हुये देखा है। हम उस पवित्र गाँव के दर्शन करेंगे व श्री सिद्ध गुफा को प्रणाम करके आवेंगे। श्री प्रभु जी ने मुस्करा कर आज्ञा दे दी और कहा कि वह स्थान यहाँ से लगभग 15 मील की दूरी पर है। तुम सब उसको तलाश करो। जो उसको तलाश करके आवेगा हम भी उसे इनाम देंगे। श्री सकल कल्याण मूल प्रभु जी की इस प्रकार की आज्ञा को पाकर सभी भाई-बहिनों ने सवाँई गाँव को तलाश करने का प्रयत्न किया किन्तु कोई भी सफल न हो सका। ये लोग एत्मादपुर व सवाँई गाँव तक भी आये किन्तु आश्चर्य यह था कि ये लोग सवाँई गाँव को पूछते थे और सुनने वाले पता नहीं क्या सुनते थे और वे लोग जो जवाब देते थे, उसको ये लोग पता नहीं क्या-क्या समझते थे। बड़ा ही विलक्षण आश्चर्य रहा। काफी प्रयत्न करने पर भी कोई भी भाई-बहिन सवाँई गाँव को तलाश नहीं कर सका। अन्त में श्री प्रभु जी के चरण कमलों में प्रार्थना की कि प्रभो ! वह गाँव हम लोगों को नहीं मिल रहा है, अब कृपा करके आप ही बतलायें कि वह

गाँव कहाँ है ? जिससे हम दर्शन कर सकें। तब श्री प्रभु जी ने ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी को आज्ञा दी कि अच्छा तुम जाओ। अब की बार तुम्हें वह सवाँई गाँव मिल जायेगा। इस प्रकार आज्ञा को पाकर भाई श्री गोपालानन्द जी आगरा से एत्मादपुर आये और एत्मादपुर में जाकर पूछा तो लोगों ने तत्काल बतला दिया। ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी सवाँई गाँव आये व श्री सिद्धगुफा के दर्शन करके पुनः आगरा लौट गये। लाला अशर्फीलाल के बाग में जिस समय ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी ने प्रवेश किया, गाँव के निवासियों को व स्वयं लाला अशर्फीलाल को यह शक हुआ कि आसपास यहाँ श्री प्रभु जी आये हैं। कर्ण परम्परा से यह बात तत्काल सारे गाँव में फैल गई कि बाबा यहाँ आस पास ही हैं। उन्होंने अपने शिष्य को गुफा के दर्शन करने को भेजा है। 10 या 12 बरस के बाद श्री प्रभु जी का पुनरागमन सुन करके दर्शनार्थ लोगों के मन बहुत ही आह्लादित हो उठे और वे इसी प्रतीक्षा में थे कि पुनः कब वे योग योगेश्वर की झाँकी पाकर अपने जीवन को सफल बनायें।

कर्माशयस्य निर्माणे, देहो हेतुर्न जायते।
न तथैवेन्द्रियाणि च, मनोवृत्तिस्तु हेतुकः।।

कर्माशयों को जन्म देने वाले शरीर और इन्द्रियाँ नहीं बल्कि मनोवृत्ति है।

योग साधन कक्षा में श्री महाप्रभुजी की विलक्षण कृपायें

– अवनीश कुमार भटनागर, सहारनपुर

हमारे एक पुराने परिचित काफी समय से हमसे बार-बार यह कहते रहे कि योगासनों की कक्षा हमारे यहाँ भी प्रारम्भ करें ताकि हम लोग भी योग के विषय में जानकारी एवं लाभ ले सकें। परन्तु मेरे मन में बार-बार यह बात आती थी कि वैसे ही तो कोई श्री महाप्रभु जी के कल्याण मय मार्ग पर चलने की जिज्ञासा नहीं, इतनी लगन से प्रकट करता है, इनका ऐसा कौन-सा उत्तम संस्कार जाग गया है जो यह श्री महाप्रभु जी के योग साधन एवं उनके साधना पथ और करुणामय आनन्द कन्द श्री चन्द्रमोहन महाप्रभुजी के विषय में ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। बहुत याद करने पर मुझे लगभग 10 वर्ष पूर्व सन् 1989 की एक घटना स्मरण हो आई। लगभग 10 वर्ष पूर्व करुणामय श्री सद्गुरुदेव चन्द्रमोहन महाप्रभुजी मुझ अधम की कुटिया पर स्थूलरूप से शायद अन्तिम बार पधारे थे और जब वह वहाँ से प्रस्थान कर रहे थे तो उपरोक्त हमारे परिचित महाशय जी सामने से आ रहे थे, महाशय जी श्री सद्गुरुदेव भगवान के विषय में कुछ भी नहीं जानते थे केवल मात्र आनन्दकन्द श्री चन्द्रमोहन महाप्रभुजी की मनोहारी सिद्धेश छवि और मुखमण्डल पर फैले दिव्य तेज को देखकर महाशय जी ने तुरन्त सड़क के बीच में ही श्री चरणों में झुककर प्रणाम किया और श्री सद्गुरुदेव भगवान ने भी कर कमल उठाकर आशीर्वाद दिया और आगे बढ़कर गाड़ी में बैठकर गन्तव्य की ओर प्रस्थान किया। बात आई गई हो गई परन्तु समय आने पर 10 वर्ष पश्चात् श्री सद्गुरु देव जी का वह कल्याणप्रद आशीर्वाद महाशय जी और न जाने कितने योग जिज्ञासुओं का कल्याण करने का कारण बनकर फलीभूत हो रहा है यह हमारे निरंतर देखने में आ रहा है।

योग साधनों की कक्षा लगाने के लिये सर्वप्रथम मैं सिद्धेश्वर महाप्रभु श्री रामलालजी एवं योगाधिपति श्री चन्द्रमोहनजी से आज्ञा लेने श्री महाप्रभुजी द्वारा स्थापित श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश जो सिद्धियों का धाम है और योगेश्वर का योग पीठ है वहाँ पर गया और प्रार्थना की कि हे दयानिधान आपकी परम कृपा एवं आज्ञा से योग साधनों की कक्षा का आयोजन किया है आप उसमें नित्य पधारने की कृपा करें, आपकी दिव्य उपस्थिति एवं शुभ संकल्प से हम

सब अधम जीवों का कल्याण हो यह विनम्र प्रार्थना आपके श्री चरणों में बार-बार है। इसके पश्चात् एक सितम्बर से एक दिसम्बर तक परम करुणामय की दिव्य उपस्थिति में योग साधना की कक्षा चलाई गई। इसमें महाप्रभु श्री रामलाल जी एवं सद्गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी की कृपायें किस-प्रकार साधकों पर बरसी व लोगों को आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के योग साधनों से किस-किस प्रकार लाभ पहुँचे यह सब बताने का प्रयास किया है।

प्रातः 6.30 बजे से 8.30 बजे तक योग साधनों की कक्षा का समय रखा गया। इसमें सबसे पहले अनादि सिद्ध योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी द्वारा परम कृपाकर जगत को दिया गया अलौकिक उपहार जीवन तत्व साधन कराये जाते। इसके पश्चात 19 अन्य योगासन जो रोगियों की आवश्यकतानुसार कराये जाते इस कक्षा में नेति क्रिया के चारों प्रकार एवं कुंजल और प्राणायाम में भस्त्रिका एवं शीतली व नाड़ी शोधन प्राणायाम आवश्यकता को देखते हुये कराये गये। फिर ध्यान का भी अभ्यास कराया जाता। कक्षा में आनन्दकन्द श्री महाप्रभुजी एवं श्री सद्गुरुदेव जी की विलक्षण लीलाओं को बताने के लिये पन्द्रह मिनट अलग से रखे गये। योग की कक्षा में दिनोदिन आश्चर्य देखने में आते रहे। सत्संग का समय 15 मिनट रखा गया था जो बढ़ कर घंटे को भी पार कर गया। किसी साधक का मन उठने को नहीं करता था। इस कैम्प में रोगी व्यक्ति भी निरन्तर आते थे जैसे सरवाइकल स्पोण्डलाइटिस, श्वांस, गठिया, शरीर दर्द, कमर दर्द, हाईब्लड प्रेशर, पेट के रोगी, शुगर के मरीज जिनकी ब्लड शुगर 400 थी एक सप्ताह के अभ्यास से घटकर 200 हो गई और यूरिन निल ही हो गई।

भारतीय योग संस्थान के साधकों ने भी कैम्प में आकर योग साधन किये और सराहनीय प्रयास बताकर जीवन तत्व साधनों की विलक्षणता को माना। धीरे-धीरे सभी साधकों की श्री महाप्रभुजी एवं श्री सद्गुरुजी जो परिपूर्ण सिद्धेश हैं के पावन श्री चरणों में श्रद्धा और बढ़ी तो एक सत्संग का आयोजन करने का प्रस्ताव साधक मण्डल ने रखा। हमें तो श्री प्रभुजी की आज्ञापालन करने का एक और अवसर प्राप्त हो गया, यह सोचकर शरीर रोमान्वित हो गया। सत्संग का आयोजन किया गया बहुत धूमधाम से सत्संग हुआ इसमें जो लोग श्री महाप्रभुजी एवं श्री सद्गुरुदेव जी से बिलकुल अपरिचित थे उन लोगों ने भी श्री करुणा निधान सद्गुरुदेव महा प्रभुजी की उपस्थिति को माना और उनकी प्रभुता को स्वीकारा और अति विलक्षण घटना तो यह रही कि सत्संग के समय लगभग 3 फुट लम्बा एक काला नाग सत्संग को सुनने आये। अक्समात

ही किसी कार्यवश कमरा खोला गया तो वहाँ सत्संग श्रवण करते हुए नाग को देखकर डरना भी स्वाभाविक था पर नाग ने किसी को कुछ नहीं कहा और अचानक ही इतना लम्बा नाग गायब भी हो गया किसी को कुछ पता भी नहीं चला। सत्संग की समाप्ति के पश्चात् भी लोगों का मन तृप्त नहीं हुआ। उन्होंने जल्दी से दूसरे सत्संग का आयोजन भी किया उसके अन्दर भी श्री महाप्रभुजी की विलक्षण कृपाओं का साक्षात्कार उपस्थित जनों को हुआ।

सत्संग के पश्चात् भी योग की कक्षा अनवरत चलती रही साधकों को शारीरिक लाभ, मानसिक लाभ, श्री महाप्रभु रामलाल जी एवं श्री चन्द्रमोहन महाप्रभुजी के दर्शन, मन्दिर तीर्थ के दर्शन, देवताओं के दर्शन, नित्य होते रहे और श्री महाप्रभुजी एवं श्री सद्गुरुदेव जी की उपस्थिति का अहसास भी बराबर बना रहा क्योंकि कक्षा चलते में गुलाब एवं चन्दन की खुशबुओं का आना कि जैसे श्री करुणा निधान आकर यह चैक कर रहे हैं कि बच्चे सुचारू रूप से कार्य को कर रहे हैं न और सन्तुष्ट होकर प्रसन्न मुद्रा में आशीर्वाद की पुष्प वृष्टि करने से यह महक वातावरण में फैल रही है। ज्यों -ज्यों कैम्प का समय समाप्ति की ओर बढ़ने लगा सभी साधकों का मन यह मानने को नहीं करता था कि कैम्प को समाप्त कर दिया जाये। सभी साधकों के मन में श्रद्धा श्री करुझा निधान के प्रति बढ़ती ही जा रही थी इसी के परिणाम स्वरूप एक साधिका को श्री प्रभुजी एवं श्री सद्गुरुदेव जी और श्री गणेश जी के दर्शन हुये उन्होंने यह बात बताई। इसका वर्णन आमतौर पर किसी से नहीं करना चाहिये। यह तो उन परम करुणा निधान की अहैतुकी कृपा है जो उन्होंने दर्शन दिये और साथ में ध्यान करने के लिये श्री गणेश जी के भी दर्शन करा दिये, एक प्रकार से उन्होंने उनको दीक्षा दे दी। इसलिये निरन्तर गणेश जी का ध्यान कर वह आज भी उस बात का पालन कर रही हैं।

अथर्व वेद

ब्रह्मचर्येण तप सा देवा मृत्युमुपाघ्नत्।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वरा भरत्।।

ब्रह्मचर्य का पालन और तपस्या करके देव पुरुषों ने मृत्यु को मार भगाया है। ब्रह्मचर्य का पालन कर यह जीवात्मा इन्द्रियों से दुर्लभ सुख को प्राप्त करता है।

विमर्श – जीवात्मा अपने कर्मों का शुभाशुभ फल भोगने के लिए, नाना प्रकार की ***योनियों में बार-बार जन्म लेता है और मरता है।*** मनुष्य योनि में वह फल भोगने के साथ ही नया कर्म भी करता है जबकि इस योनि के अलावा ***अन्य सभी योनियों में जीवात्मा सिर्फ पूर्व कर्मों का फल भोगता है नया कर्म नहीं करता।*** ऐसी दुर्लभ और अत्यन्त उपयोगी मनुष्य योनि का समय, नाना प्रकार के विषयभोग और कुकर्मों को करने में उलझा रह कर, बेकार व्यतीत कर देता है और ***इन कर्मों का फल भोगने के लिए विभिन्न योनियों में भटकता रहता है।*** इस मनुष्य जीवन का सदुपयोग करने, उचित उपभोग करने और अच्छे कर्म कर आत्मोन्नति करने के लिए हमें ब्रह्मचर्य का पालन और व्यायाम का नियमित अभ्यास अवश्य करना चाहिए ताकि हम इस जीवन में लम्बे समय तक स्वस्थ और बलवान बने रह सकें और शुभ कर्म करते रह सकें।

प्रेषण कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तो का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सँवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________________

____

____

अहम् सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधाः भावसमन्विता।।

(गीता 10/8)

मैं (भगवान) ही सबका उत्पत्ति–स्थान हूँ और समस्त जगत् की मुझ (भगवान) से ही प्रवृत्ति होती है, यह मानकर बुद्धिमान् भावसम्पन्न पुरुष अपने (सब कर्मो द्वारा सर्वत्र सदा) मेरा ही भजन सेवन करते हैं।

संस्थापक:– योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महराज। मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. दासलाल शर्मा के लिए राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा–3 से मुदित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवाँई (एत्मादपुर) आगरा से प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/14566. सम्पादक : आचार्य ब्र. (डॉ.) दासलाल शर्मा